वर्ष ६—अप्रैल और मई—संख्या ४ और ५

उपन्यासस्तु वाङ्मुखम्

उपन्यास

मासिक पुस्तक

अनेक उपन्यासों के रचयिता,
श्रीकिशोरीलालगोस्वामि-
लिखित, सम्पादित और
प्रकाशित

याकूती तख़्ती, वा यमज सहोदरा।

काशी
हितचिन्तक प्रेस में मुद्रित

"नहीं दैरो हरम से काम, हम उलफ़त के बन्दे हैं।
वही काबा है अपना, आरज़ू दिल की जहां निकले॥"
(असगर)

प्रथम१०००] सन् १९०६ ईस्वी [मू. ३) आने

"उपन्यास" — मासिक पुस्तक का मूल्य डाकव्यय सहित, सर्वत्र।

उपन्यास मासिकपुस्तक ।

हिन्दी भाषा के प्रेमियों को विदित हो कि "उपन्यास" नामक एक "मासिकपुस्तक" पहली जनवरी, १९०१ इस्वी से बराबर आज तक निकलती चली जाती है । इसका आकार 'डिमाई आटपेजी पांचफार्म, अर्थात ४० पृष्ठ है, और इसमें हर महीने नवीन उपन्यास के ४० पृष्ठ रहा करते हैं । एक उपन्यास के पूरे होने पर दूसरा नवीन उपन्यास प्रारंभ कर दिया जाता है और कभी कभी दो दो उपन्यास एक साथही छपा करते हैं । इसका दाम भी बहुत नहीं है, सर्वसाधारण से केवल दो रुपए साल लिये जाते हैं और डांकमहसूल किसीसे कुछ नहीं लिया जाता। हां, राजे महाराजे, अमीर, सेठ, साहूकार आदि धनिक अपनी शक्ति के अनुसार जो कुछ इसकी सहायतार्थ द्रव्य भेजते हैं, वह धन्यवाद-सहित स्वीकार किया जाता है और उनका नाम सहायकों में छाप दिया जाता है ।

जिन उपन्यास-प्रेमियों को इस "मासिकपुस्तक" का ग्राहक होना हो, वे शीघ्रही दो रुपए भेजकर ग्राहक बन जायं, और जो सज्जन 'नमूना' देखना चाहें, उन्हें चाहिए कि नमूने के लिये 'चारआने' का टिकट भेजें । हां, इतना ध्यान रहेगा कि जो लोग चारआने भेजकर नमूना मंगावेंगे, वे यदि पीछे से ग्राहक होजायंगे तो उनसे चारआने मुजरे देकर केवल पौनेदो रुपएही लिये जायंगे । वी.पी.का खर्च, एक आना, ग्राहकों को ही देना पड़ेगा । हां, डांकमहसूल किसीसे कुछ भी नहीं लिया जायगा ।

यह "गुलबहार" उपन्यास, तथा लीलावती, राजकुमारी, स्वर्गीय-कुसुम, चपला, तारा रज़ीयाबेगम, मल्लिकादेवी, हृदयहारिणी, लवङ्गलता तरुणतपस्विनी, आदि परमोत्तम और प्रशंसित उपन्यास इसी सुप्रसिद्ध "उपन्यास" नामक मासिकपुस्तक में ही छपकर हिन्दीरसिकों के गले के हार होरहे हैं । अतएव जो हिन्दी जानते हैं, जिन्हें अपनी मातृभाषा हिन्दी से कुछभी अनुराग है और जो हिन्दुस्तान की 'राष्ट्रभाषा' हिन्दी का कुछभी उपकार करना अपना धर्म समझते हैं, उन सज्जनों को चाहिए कि इस "उपन्यास" मासिक पुस्तक के ग्राहक बनकर हमारे उत्साह को बढ़ावें और अपनी मातृभाषा हिन्दी के उद्धार करने में कटिबद्ध होवें । आप जो इस "गुलबहार" उपन्यास वाला "उपन्यास"–मासिकपुस्तक का नंबर देखरहे हैं, बस, इसीको उक्त "उपन्यास" मासिकपुस्तकका नमूना समझिए और झटपट आपभी ग्राहक बनिए और अपने मित्रों को भी ग्राहक बनाइए।

श्रीकिशोरीलालगोस्वामी,

संपादक 'उपन्यास' मासिकपुस्तक, काशी ।

श्रीः

याकूतीतख्ती
वा
यमज-सहोदरा
उपन्यास

पहिला परिच्छेद
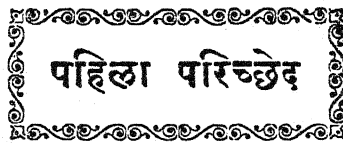
तरुण अवस्था के साथही साथ, परम स्वाधीनता और विपुल धन को पाकर मैं चाटुकारों की दुष्टता के कारण कुमार्ग में जाही चुका था कि परमात्मा के परम अनुग्रह से बहुतही बच गया। तो क्यों कर बचा, इस जीवनी में उसी कहानी का उल्लेख करता हूं,—

मेरा नाम जगदीशचन्द्र मित्र है। मेरे पिता मुर्शिदाबाद के बड़ेभारी ज़िमादार थे, पर अब न तो मेरी माताही हैं और न पिता। मैं अपने पिता का एकमात्र सन्तान हूं और अब पचास हज़ार रुपए की सालाना आमदनी का भोक्ता और हर्त्ता, कर्त्ता, बिधाता हूं।

मेरी अवस्था इस समय सत्ताईस वर्ष की है। जब मेरी माता, तथा मेरे पिता जीवित थे और मेरी अवस्था केवल उन्नीस वर्ष की थी, तथा मैं बी०ए० पास कर चुका था, हुगली के एक मध्यवित्त ज़िमींदार की कन्या से मेरा बिवाह हुआ था; किन्तु वह बिवाह जैसा हुआ, वैसा न हुआ,— दोनो बराबर था। क्योंकि मैंने बासरगृह के बाद फिर अपनी पत्नी की सूरत न देखी! इसका कारण यही था कि बिवाह के

बरस दिन बाद ही वह स्त्री मर गई थी।

उसके बाद ही प्रथम मेरी माता का, और फिर पिता का देहान्त हो गया और इन्हीं कारणों से मेरा पुनर्बिवाह अभीतक न हो सका।

मैं ब्राह्म-मतावलम्बी हूं, और मेरे पिता भी इसी मत पर विश्वास करते थे। सो ब्राह्मभ्राता और ब्राह्मभगिनीजनों ने अपने कुचक्र में फंसाकर मुझे बिगाड़ने पर कमर बांधी और मैं भी कुछ बिगड़ चला तथा अपने कुछ धन को भी मैंने बर्बाद किया; किन्तु जगदीश्वर ने मुझे उस कुचक्र तथा कुचाक्रियों से बहुतही बचाया।

बात यह है कि उन दिनों, जिन दिनों का हाल मैं यहां पर लिख-रहा हूं, अपनी ज़िमीदारी के एक मुकद्दमे के कारण कलकत्ते में रहता था। कई ब्राह्मभ्राताओं ने मिल कर मुझे सब्ज़बाग दिखलाना प्रारंभ किया और विलासिनी नाम की एक रूप और यौवन सम्पन्न ब्राह्मभगिनी से मुझे परिचित किया। फिर तो मैं यौवन, धन, सम्पत्ति और प्रभुत्व के मद से मदान्ध होकर विलासिनी की विलासिता में ऐसा डूबा कि मुझे दीन दुनियां की कुछ भी ख़बर न रही और उसी अवस्था में डूबे रहने के कारण अदम पैरवी में मेरा अस्सी हज़ार का वह मुकद्दमा भी चौपट होगया; पर उस समय मुझे उसका कुछ भी खेद न हुआ।

केवल इस मुकद्दमे में ही मेरे सवालाख रुपए खर्च नहीं होगए थे, बरन ब्राह्मभगिनी विलासिनी, तथा ब्राह्मभ्राताओं की परिचर्या में भी मेरे एक लाख रुपए केवल उन्नीस महीने ही में नष्ट होगए थे! कदाचित मैं बिलकुल कंगाल होगया होता और मेरी सारी सम्पत्ति को ब्राह्मभगिनी तथा ब्राह्मभ्रातागण आत्मसात् कर गए होते; किन्तु जगदीश्वर की अनन्त दया के कारण एक ऐसी घटना घटी कि मैं उससे बिल्कुल चैतन्य होगया और मेरा सारा मद उतर गया!

वह बात यही थी कि एक दिन मैंने विलासिनी को मल्लिकघराने के एक नवयुवक के साथ असत रसालाप करते देखा और फिर छिपकर उन दोनो के व्यभिचार को भी प्रत्यक्ष देखा। बस, वह एक ऐसी भयंकर घटना थी कि उसने मेरे सारे नशे को बात की बात में मिट्टी कर दिया और मैं चैतन्य होकर उसी दिन कलकत्ते का मुहं काला करके अपने घर, मुर्शिदाबाद चला गया।

घर आकर मैंने अपनी ज़िमीदारी के काम काज को देखना प्रारंभ किया और काग़ज़ के देखने से यह बात भी मैंने जानी कि उन्नीस महीने

कलकत्ते रह कर मैने एक लाख रुपए कुमार्ग में नष्ट किए और सवा लाख का मुकद्दमा चौपट किया !

निदान, मैंने होश में आकर व्यारिष्टर अमरनाथ घोष को उस मुकद्दमे की पैरवी के लिये बिलायत भेजा और अपने सदाशय मुनीम सत्यचरण मित्र के ऊपर ज़िमीदारी के सारे बोझ को डाल कर अपना जी बहलाने के लिये मैं देशभ्रमण को निकला । क्योंकि दुश्चारिणी विलासिनी ने मेरे हृदय-क्षेत्र में वह आग लगाई थी कि जिसकी ज्वाला से मैं ऐसा भुना जाता था कि घर पर एक मास से अधिक किसी भांति न ठहर सका।

निदान, सन् १८९८ साल के जेठ महीने के प्रारंभ में मैं बीच के कई नगरों में घूमता हुआ नैनीताल जा पहुंचा। उस समय बंगदेश भयानक प्लेग के भयंकर अत्याचार से नष्टप्राय हो रहा था, पर नैनीताल में दुष्ट प्लेग का कहीं नाम भी न था और सरदी के कारण जेठ की गरमी का भी कहीं पता न था।

नैनीताल आकर पहिले तो मेरा जी उचाट सा होगया, क्योंकि वहां पर मेरा ऐसा कोई परिचित न था, जिससे घड़ी भर जी बहलाया जाता! किन्तु कुछ दिनों के बाद मैंने अपने मन के अनुसार एक मित्र पाया, जिसके पाने से मुझे कैसा आशातीत लाभ हुआ, आगे चल कर मैं उसी बात का उल्लेख करूंगा।

मैंने जिस मित्र को पाया, वे सिक्ख-संप्रदार में दीक्षित थे, पटियाला राज्य में उनकी विस्तृत ज़मीदारी थी और नाम उनका राय निहालसिंह था।

निहालसिंह की अवस्था मेरे बराबर कीही थी और वे उस समय, जबकि मैं नैनीताल पहुंचा था, नैनीताल में आकर ठहरे हुए थे। वे "सीमान्त संग्राम" के लिये महाराज पटियाले के साथ सेनापति बन कर गए थे, और मेरे जाने के कुछ ही दिन पहिले वे नैनीताल में आ कर ठहरे हुए थे।

किन्तु उस असिजीवी सिक्खवीर के साथ मुझ जैसे मसिजीवी भीरु बंगाली की, जो कि दोनो परस्पर भिन्न प्रकृति के थे, क्योंकर मित्रता हुई, इसके लिखने में मैं नितान्त असमर्थ हूं।

मैं जब तक वहां था, प्रतिदिन ही निहालसिंह के साथ तीसरे पहर, पहाड़ पर घूमने के लिये निकलता। उस समय हमदोनो की विभिन्न

आकृतिं और बिभिन्न प्रकृति देखकर देखनेवाले भीतर ही भीतर मुस्कुराते थे। क्योंकि निहालसिंह अपनी स्वदेशी पोशाक में रहते थे और मैं काले रंग को दूर न कर सकने पर भी साहबी पोशाक में रहता था। बस, यही देखनेवालों के मुस्कुराने का कारण था। पहाड़ पर घूमने के समय हम दोनों के हाथ में एक बड़ीसी बांस की लाठी रहती थी और उपन्यास के नायक की भांति हमदोनों बेफ़िक्री के साथ पहाड़ की सैर किया करते थे।

एक दिन तीसरे पहर के समय हमलोग घूमते फिरते पहाड़ की एक ऐसी जगह पर जा पहुचे, जहां पर इसके पहिले कभी नहीं गए थे। वह स्थान बहुत ही सुहावना था। एक पर्वत की कंदरा में से बड़े बेग से जलप्रवाह आकर नदीरूप में बह रहाथा। वहां दोनो किनारों की वृक्षश्रेणी इतनी घनी थी कि जिसमें सूर्यरश्मि किसी तरह भी नहीं घुस सकती थी। यही कारण था कि वहांपर एक पहर दिन रहते भी संध्याकाल की तामसी छाया फैल रही थी। वह स्थान और वहांका प्राकृतिक दृश्य इतना सुहावना था कि हमलोग एक स्वच्छ शिलाखंड पर पैर लटका कर बैठ गए और इधर उधर की बातें करने लगे।

उस समय 'प्राकृतिक प्रसङ्ग' के साथ ही साथ 'प्रेमप्रसङ्ग' की बात चल पड़ी और हमदोनों में देरतक 'प्रेम' पर तर्क वितर्क होता रहा। अन्त में मैंने कुछ ताने के साथ निहालसिंह से कहा,—

"क्यों, भई, निहालसिंह! 'प्रेम' के विषय में जैसी तुम्हारी बिमल और परिष्कृत मति है, उससे तो मुझे ऐसाही प्रतीत होता है कि तुम इस (प्रेम) मार्ग में किसी अच्छे प्रेमिक (प्रेमिका?) से दीक्षा लेचुके होगे! किन्तु इस विषय में तो तुमने अबतक मुझे कोई बात ही न बतलाई! अभी तक तुमने मुझे यह भी न बतलाया कि तुम विवाहित हो या अविवाहित, और तुमने इस प्रेममार्ग का सचमुच अनुसरण किया है, या योंही सुनी सुनाई बात पर विश्वास करके 'प्रेम' पर गंभीर व्याख्यान देना सीखा है।"

मेरी बात सुनकर निहालसिंह ने एक 'कहकहा' लगाया और मेरी ओर देरतक घूरकर कहा,—

"तो, तुमभी तो अभीतक क्वारे हो! फिर तुम इस 'प्रेमप्रपंच' पर ऐसा अच्छा तर्क वितर्क ऐसे करते हो! क्या विवाह के बिना कोई 'प्रेम' का वास्तविक तत्व पाही नहीं सकता!"

मैने कहा,—" यह तुम्हारा प्रश्ण निर्मूल है ! क्योंकि यद्यपि मैं अबतक एक प्रकार से अविवाहित या परिणीता भार्या से रहित हूं, तथापि ' विलासिनी ' के संसर्ग से जो कुछ प्रेम का तत्व मैने जाना, उसका हाल तो मैं तुमसे कही चुका हूं ! "

यह सुन निहालसिंह ने सिंह की तरह गरज कर कहा,—" छिः ! विलासिनी से जो कुछ तुमने सीखा, वह प्रेम नहीं, बरन गरल है ! तुम निश्चय जानो कि यदि वेश्याओं, कुलटाओं, और पुँश्चलियों ही के पास प्रेम—वास्तविक प्रेम हो तो फिर स्नेहमयी परिणीता भार्या की आवश्यकता ही न रहजाय । "

मैने कहा,—" यह तुम्हारा कहना बिल्कुल सही है, परन्तु क्या वेश्या, या कुलटा बिलकुलही प्रेमशून्य होती हैं ?

निहालसिंह ने कहा,—" यदि उनमें तुम्हारे कहने से कुछ प्रेम का अंश मैं मान भी लूं, तौभी वह 'प्रेम,' विशुद्ध और स्वर्गीय प्रेम कदापि नहीं कहा जा सकता । "

मैने कहा,—" यदि तुम्हारा मत माना जाय तो साहित्यशास्त्र की परकीया और सामान्या नायिका के प्रेम पर हरताल ही लगाना पड़े ! "

निहालसिंह ने कहा,—" तुम अपनी बुद्धि पर लगी हुई हरताल को तो पहिले धो डालो ! तुम यदि स्वयं कुछ भी साहित्य जानते हो तो स्वयं इसका निर्णय कर लो कि स्वीया, परकिया और सामान्या नायिकाओं में विशुद्ध और आदर्श प्रेम की आधार कौन नायिका होती हैं ! "

मैने कहा,—" मेरे जान, परकीया ! "

निहालसिंह,—" कदाचित तुम ऐसा ही समझो, या कदाचित ऐसा ही हो भी ; परन्तु मेरे जान तो जैसा प्रेम सती साध्वी, स्वीया नायिका कर सकती हैं, वैसा दूसरी से कदाचित नहीं प्राप्त हो सकता ।"

मैने कहा,—" अच्छा, इस बिषय में तुमसे फिर किसी समय बिवाद करूंगा और यदि हो सका तो तुमसे एक बार नायिकाभेद भी अवश्य पढ़ूंगा, परन्तु इस समय तुम यह तो बतलाओ कि तुमने अब तक कोई "स्वीया" नायिका के प्रेम का रसास्वाद पाया है, या नहीं ! "

यह सुन, निहालसिंह अपने हाथ पर हाथ मार कर खूब ज़ोर से हंस पड़े और कहने लगे,—

" तुम्हारे इस बिलक्षण प्रश्ण के उत्तर में मुझे आज अपनी जीवनी

की एक गुप्त कहानी कहनी पड़ी। मैंने व्यर्थ समझ कर अबतक जिस रहस्य को तुम पर प्रगट नहीं किया था, उसे आज बलपूर्वक तुमने मेरे पेट से निकलवा लिया। अस्तु, तुम ध्यान देकर मेरी कहानी सुनो, जिससे कदाचित तुम्हें प्रेम का कोई निगूढ़ तत्व मिल जाय।"

निहालसिंह कहने लगे,—" यह बात मैं तुमसे कह आया हूं कि महाराज पटियाले के साथ मैं वालंटियर होकर अफ़रीदियों के साथ लड़ने के लिये गया था। इस लड़ाई में जाने के लिये मुझे कुछ वैसा विशेष आग्रह न था, किन्तु घर पर खाली बैठे रहने की अपेक्षा लड़ाई के मैदान को मैंने मनोविनोद का हेतु समझ कर यात्रा की थी। इसमें एक और भी कारण था। वह यह कि मेरे पुरुषाओं ने जिस बृटिश गवर्नमेन्ट की सेवा करके बड़ी नामवरी के साथ ख़िलत, जागीर और तमगे पाए थे, उस गवर्नमेन्ट की सेवा करनी भी मैंने अपना धर्म समझा। सो पशुओं का शिकार तो मैंने बहुत खेला था, अब मनुष्यों के शिकार के लिये महाराज पटियाले के साथ बृटिश गवर्नमेन्ट की सहायता के लिये मैं चला।

" उस समय जैसे उत्साह और उद्यम के साथ अटल हृदय से मैंने समरभूमि का पूजन कर के निज कार्य का सम्पादन किया था, वह अब सपना सा जान पड़ता है।"

मैंने कहा,—" निहालसिंह तुम धन्य हो और तुम्हीं बीर-प्रसविनी माता के उपयुक्त सन्तान हो। गुरु गोविन्दसिंह के वीर हुंकार की रक्षा करनेवाली वीर सिक्ख जाति में तुम्हारा जन्म लेना सार्थक है। हाय, हम बंगाली की जात, सिवाय बकबक के और कुछ जानते ही नहीं; इसीसे हम " भीरु " उपाधि से विभूषित किए गए हैं।"

मेरी इन बातों का निहालसिंह ने कुछ जवाब न दिया और अपने वक्तव्य को पुनः इस प्रकार प्रारंभ किया,—

" अच्छा, सुनो, —दिसंबर महीने के अन्त होते होते, अंगरेज़ी सेना ने टिड्डीदल की भांति ' बाज़ार बेली ' को जाकर छा लिया। एक तो कलेजे के टुकड़े उड़ाने वाला ' हाड़ तोड़ ' जाड़ा, उसपर असभ्य अफ़रीदियों का भयानक अत्याचार! वे दुष्ट जब मौका देखते, तभी आकर छापा मारते, और जब तक हमलोग तैयार होते, वे लूट खसोट करके पहाड़ में अदृश्य हो जाते थे। उन कंबख्तों के आक्रमण का न कोई समय था और न वे बरोचित रीति से सामने डंट कर लड़तेही थे। बस, उनका

यही काम था कि जब और जिधर से वे सुभीता पाते, एकाएक पंजे झाड़ पड़ते थे, और जहां तक बनता, मार कार और लूट खसोट करके भाग जाते थे। वे बराबर ऊंचे पहाड़ों की चोटियों पर से सावनभादों की झड़ी की भांति गोली बरसाते और बड़ा उपद्रव मचाते थे। उनकी यह दशा देखकर सेनापति की आज्ञा से हम लोगों ने अपने डेरे उखाड़े और बड़ी तेज़ी के साथ उस ' कलेजातोड़ ' जाड़े की कुछभी पर्वा न करके हुंकारध्वनि करते हुए अफ़रीदियों के गांव की ओर बढ़े। उस समय उस भयानक, दुर्गम, अपरिचित, बीहड़ और बरफ़ से ढंके हुए पहाड़ी रास्ते में हमलोगों को जैसे२दुःख भोगने पड़े थे, वह जीही जानता है। आहः वह कैसा भयानक समय था कि ऊपर—पहाड़ की चोटियों पर से तो गोली के मेह बरसते थे और नीचे—बहुत ही नीचे, बीहड़ रास्ते को साफ़ करते हुए हमलोग मरते पचते आगे बढ़ते जाते थे!!!

" उस समय सिवाय मरने के और कुछ चारा न था; क्योंकि बैरी ऊपर थे और हमलोग नीचे; उनकी गोली हमलोगों का काम तमाम किए देती थी,-और हमलोगों के गोली गोले उन तक पहुंचतेही न थे। ऐसी अवस्था में जब तीन बार अंगरेज़ी सेना ने पूरी हार खाई, तब सेनापति सर विलियम लाकहार्ट साहब मारे क्रोध के पागल होगए, किन्तु बैरियों की गोलीवर्षा के आगे उनकी एक न चली और बहुतेरे सिपाही खेत रहे।

" अन्त में हमलोगों की ' सिक्ख रेजिमेन्ट " और ' गोर्खा सेना ' उस गोलीवर्षा में नृत्य करती हुई साक्षात् मृत्यु को तुच्छ करके बड़ी तेज़ी के साथ पहाड़ पर चढ़ने लगी। उस दिन, उस मृत्युमय पहाड़ पर चढ़ने के समय, कितने नामी बहादुरों ने अपने प्राण खोए होंगे, इसकी गिनती नहीं है; क्योंकि तुम लोगों ने अख़बारों में जो कुछ पढ़ा होगा, उसे बहुतही थोड़ा कहना चाहिए। अस्तु, जगदीश्वर की दया से उस दिन हमलोगों ने अपने सेनापति के सन्मान की रक्षा की और साक्षात् मृत्यु के भी मुहं में थपेड़े लगाकर बैरियों के ' चिन ' नामक एक बहुत बड़े गांव पर अपना अधिकार कर लिया। अफ़रीदियों के उस बड़े इलाके में, पर्वत के ऊपर, बृटिशपताका फहराने लगी और हमलोगों ने भी विजयोल्लास से उन्मत्त होकर अपनी कमर ढीली की। क्योंकि फिर कई दिनों तक अफ़रीदियों का गोल नहीं दिखलाई पड़ा था और अब हमलोग ऐसी ऊंची जगह में थे कि जहां पर उनके एकाएक आकर

छापा मारने का भी उतना डर न था।

'इतने ही विजय से हमलोग निश्चिन्त नहीं हुए। क्योंकि हमलोगों का संकल्प था कि अफ़रीदीमात्र का मूलोच्छेद कर डाला जाय। परन्तु अफ़रीदियों की प्रधान बस्ती 'लुण्डीकोतल' तक पहुंचने के लिये सुगम मार्ग के जानने की बड़ी आवश्यकता थी, इसलिये सौ सौ सैनिकों का एक एक गोल चारोओर सुगम मार्ग के अनुसंधान के लिये रवाने कर दिया गया था। उन्हीं गोलों में से एक गोल के साथ मैंभी एक ओर को गया था। हमलोगों को सेनापति ने तीन दिन के भीतर लौट आने की आज्ञा दी थी, किन्तु दैवसंयोग से हम दो चार आदमी अपने गोल से बिछुर गए और अनजाने पहाड़ी देश में इधर उधर भटकते रहे। उस समय हमलोग ऐसी भूलभुलैयां में पड़ गए थे कि न तो अपने गोलही को पाते थे और न अपनी छावनी के मार्ग ही को।

"निदान, योंही भटकते हुए हम लोग चौथे दिन, तीसरे पहर के समय एक पहाड़ी पगदंडी से चले जाते थे कि पासही के एक घने जंगल में से कुछ कोलाहल सुन पड़ा। यह सुनतेही हम लोग ठहर गए और अपने अपने हर्बे हथियारों को सम्हाल कर यह जानने की कोशिश करने लगे कि यह कैसा कोलाहल है! इतने ही में हमलोगों ने एक स्त्री की करुणमय रोदनध्वनि सुनी और झट उधर की ओर पैर बढ़ाया। बात की बात में हमलोग वहां पहुंच गए और जाकर क्या देखते हैं कि तीन चार गोर्खा सिपाही एक परमसुन्दरी युवती को पकड़ कर 'खैंचातानी' कर रहे हैं और पासही पेड़ से एक अफ़रीदी युवक जकड़ कर बांध दिया गया है।

"यह देखते ही असल मतलब को मैंने समझ लिया और घुड़क कर उन पाजी गोर्खों को वहांसे चले जाने के लिये कहा। संयोग अच्छा था कि बिना 'खूनारेज़ी' किए ही वे गोर्खे वहांसे भाग गए और मैंने अपनी तलवार से उस अफ़रीदी युवक के बंधन को काट कर उस युवती से कहा,—"सुन्दरी! अब तुम न डरो, क्यों कि वे बदमाश भाग गए।"

"क्रोध, क्षोभ, अभिमान और आत्मगौरव के कारण उस सुन्दरी युवती की नुकीली और कानतक फैली हुई बड़ी बड़ी आंखों से उस समय आग बरस रही थी और उसका सारा शरीर थरथर कांप रहा था। सो, एक पत्थर के टुकड़े पर बैठ और अपने चित्त को कुछ शान्त करके उस युवती ने कहा,—

दूसरा परिच्छेद

" अय बहादुर, अय नौजवान, अय जवांमर्द ! मेरा वालिद एक अफ़रीदी सर्दार है। जब अंगरेजी फ़ौज के सब्जकदम यहां पर नहीं आए थे, तब मैं अपने वालिद के साथ यहीं रहती थी। लेकिन दुश्मनों की फ़ौज के आजाने से सब औरतें तो एक हिफ़ाज़त की जगह में पहुंचा दी गई हैं, पर मैं अपने वालिद को छोड़ कर कहीं नहीं गई, इसलिये जब मेरा जी घबराता है, तब इस पहाड़ पर चहलकदमी के लिये अपने पड़ाव से निकल आती हूं। आज भी मैं इस ओर आकर घूम रही थी कि इन हरामज़ादों ने मुझे आघेरा था। अगर ख़ुदा के फ़ज़ल से तुम इस वक्त यहां न आ मौजूद होते तो,—अफ़सोस ! मेरी बिल्कुल आबरू बर्बाद हो जाती। "

यों कहते कहते उस सुन्दरी ने कई बार मुझे ऊपर से नीचे तक निहारा और कई बार ठंढी उसासें लीं। फिर मैंने पूछा,—" यह तुम्हारे साथ कौन है ? "

उस सुंदरी ने कहा,—" यह मेरे वालिद का ग़ुलाम है और नाम इसका अबदुल्करीम है, उन कंबख़्तों ने यहां आतेही पहिले तो अबदुल को पेड़ से बांध दिया, फिर मेरी आबरू लेनी चाही, इतने हीमें तुम आगए। "

मैंने कहा,—" यदि तुम्हारे मुखिया लोग व्यर्थ अंगरेज़ों के विरुद्ध उत्पात न करते तो आज तुम पर यह आपदा कभी न आती। "

यह सुनतेही उस सुन्दरी की आंखों में खून उतर आया और उसने बेतरह मुझे घूर कर कहा,—" छिः ! तुम यह क्या कह रहे हो ! इसमें तो सरासर अंगरेज़ों की ज्यादती है कि वे नाहक हमलोगों के साथ छेड़छाड़ करते हैं; लेकिन तुम तो अंगरेज़ों के ग़ुलाम हो, इसलिये तुम आज़ादी की कीमत नहीं समझ सकते। देखो, उस दिन मेरे वालिद ने सिर्फ़ अस्सी सिपाहियोंके साथ तुम लोगों को जो शिकस्त दी थी, मैं समझती हूं कि उसे तुम उम्रभर न भूलोगे। मुझे तुम लोगों की सिपहगरी पर अफ़सोस होता है कि कई हज़ार सिपाहियों के रहते भी तुमलोगों

को वह हार खानी पड़ी और हमलोगों का तुमलोग कुछ भी न कर सके; लेकिन, अय बहादुर। हमारे थोड़े से सिपाही आख़िर करही क्या सकते थे! चुनांचे जब कई शिकस्त के बाद तुमने उन पर फ़तहयाबी पाई तो मेरे वालिद अपने वफ़ादार बहादुरों के साथ इस मुकाम को छोड़ कर दूसरे अड्डे पर चले गए हैं।"

उस सुन्दरी की इस विचित्र बात को सुनकर मेरे अचरज का कोई ठिकाना न रहा, इसलिये मैंने पूछा,—"एं! उस दिन जो हमारी ओर के तीनसौ सिपाही मारे गए, यह क्या तुम्हारे केवल अस्सी सिपाहियों काही काम था?"

उस सुंदरी ने कहा,—"हां, सिर्फ़ अस्सी सिपाही थे। लेकिन इससे तुम इतना ताज्जुब क्यों करते हो! याद रक्खो कि हमारे अफ़रीदी जवान तुमसे कम बहादुर व लड़ाके नहीं हैं और उनकी बंदूकों की गोलियां कभी निशाना चूकती ही नहीं। लेकिन अगर कोई अफ़सोस का मुकाम है तो सिर्फ़ यही है कि वे तुमलोगों के मुकाबले गिनती में कम हैं। तो भी अफ़रीदी अपनी हुकूमत और आज़ादी की हिफ़ाज़त के लिये अपनी जान की कुछ भी पर्वा नहीं करते। बस, उनका अगर कुसूर है तो यही है कि गिनती में कम होने के सबब वे तुम्हारे सामने होकर नहीं लड़ सकते।"

मैंने कहा,—"तो फिर वे अंगरेज़ों की आधीनता क्यों नहीं स्वीकार करते?"

उस सुंदरी ने इसका जवाब बड़ी कड़ाई के साथ दिया; उसने कहा,—"क्या कहूं, अगर अफ़रीदी हिन्दुस्तानियों की तरह कभी गुलामी किए होते तो बेशक वे अपनी आज़ादी अंगरेज़ों के हाथ बेच देते, लेकिन इनसे ऐसा होना गैरमुमकिन है। जब तक एक अफ़रीदी भी जीता रहेगा, वह हर्गिज़ किसीकी गुलामी या मातहती कबूल न करेगा। अय, नेकबख्त, बहादुर! बड़े अफ़सोस का मुकाम है कि तुम्हारे पाजी गोर्खे सिपाहियों ने मुझपर चोरी से छापा मारा, अगर वे सामने से आकर मुझपर जुल्म करने की नीयत करते तो यही छुरी (दिखलाकर) पारी पारी से उन सब कंबख्तों के कलेजे के पार तक की ख़बर लेआती और लोगों को यह दिखला देती कि अफरीदी औरतों के नाज़ुक हाथ भी वक्त पड़ने पर इस कड़ाई के साथ दुश्मनों के कलेजे का खून पी सकते हैं।"

ओफ़ ! उस भयंकर छुरे को देखकर मेरा वीरहृदय भी कांप उठा! किन्तु उस छुरे से उस सुंदरी के नेत्रों की तीक्ष्णता कहीं बढ़ी चढ़ी थी। अहा ! उस संध्या के उमड़ते हुए अंधेरे में, उस सूनसान पार्वतीय वन में, उस पठानकुमारी के सुंदर मुख से जो बारंबार क्रोध, क्षोभ, मनस्ताप, और वीरत्वव्यंजक भाव प्रगट होते थे, उनसे उस सुंदरी की सुंदरता की शोभा और भी बढ़रही थी; और यही प्रतीत होता था कि मानो आकाश से कोई अप्सरा उतर आई हो, या वन देवी वन में से निकलकर पर्वत की उपत्यका में नृत्य कर रही हो !

अस्तु, थोड़ी देर चुप रहकर मैंने पुनः कहा,—" सुन्दरी ! अंगरेज़ी गवर्नमेन्ट की यह इच्छा कदापि नहीं है कि किसी निस्सहाय स्त्री का अपमान किया जाय ! हमलोगों की यदि शत्रुता है, तो केवल अफ़रीदी पुरुषों के साथ है, न कि उनकी स्त्रियों के साथ,—इसलिये अब तुम अपनी इच्छा के अनुसार जहां चाहो, जा सकती हो । और यदि मुझसे तुम्हारा कोई काम बन पड़े तो बिना संकोच कहो; मैं, जहांतक मुझसे होसकेगा, तुम्हारा काम कर दूंगा। "

यह सुनकर उस सुंदरी ने बड़ी नम्रता से कहा,—" आह ! आपकी इस मिहरबानी को मैं ताज़ीस्त न भूलूंगी। आज आपने जैसी भलाई मेरे साथ की है, वह क्या कभी भूल सकती है! इसलिये अब मैं अपने वालिद के पास जाऊंगी। मेरी मां नहीं है, सिर्फ़ मेरे वालिद ही हैं और एक मेरी बहन है। हम दोनों बहन साथही पैदा हुई थीं, और लोग कहते हैं कि हम दोनो को जनतेही मेरी मां बिहिश्त को चली गई थीं। तब से मेरे वालिद ने फिर दूसरी शादी न की और हम दोनो बहिनों की पर्वरिश इस तरह की कि जिसमें हम दोनों को कभी मां के लिये तरसना न पड़े। "

उस सुंदरी के निष्कपट भाव को देख कर मैं बहुत ही प्रसन्न हुआ और मैंने कहा,—" सुन्दरी ! मैं एक बात जानना चाहता हूं, क्या तुम कृपा करके उसे बतलाओगी ? "

उस सुंदरी ने कहा,— मैं वेशक बतला दूंगी, अगर वह बात मुल्क और आज़ादी से ताल्लुक न रखती हो। "

मैंने कहा,—" नहीं ; मैं केवल तुम्हारा नाम जानना चाहता हूं ! "

उस सुंदरी ने कहा,—" आह ! यह तो एक महज़ मामूली बात है ! मुझे लोग हमीदा कहते हैं। "

यों कह कर उसने मुझसे फिर आंखें मिलाईं और तुरंत (आंखें) नीची करलीं ! अहा ! उस मिलाप में विद्युच्छटा की ऐसी अपूर्व माधुरी थी कि जिसका रसास्वाद मैं जिह्वा से नहीं कह सकता ! अस्तु, मैंने उस नेत्र-चापल्य पर उस समय विशेष ध्यान नहीं दिया और हमीदा से बिदा होना चाहा; इतने ही में उसके अनुचर अबदुल् ने कहा,—

"हुज़ूर ! आपकी फ़ौज के सिपाही हर चहार तरफ़ घूमरहे हैं, इससे मुमकिन है कि रास्ते में फिर मेरी किसीसे मुठभेड़ होजाय और बीबी हमीदा पर कुछ आंच पहुंचे, वैसी हालत में मैं अकेला अपने मालिक की दुख़्तर की हिफ़ाज़त क्योंकर कर सकूंगा ?"

मैं क्या कापुरुष था कि पास शस्त्र के रहते भी अबदुल् की ऐसी बात सुन कर चुप रह जाता ! सो मैंने कहा,—"मेरे साथ रहने पर किसीकी भी इतनी सामर्थ्य नहीं है कि स्त्री की ओर आंख उठाकर देख सके ! इसलिये चलो, मैं हमीदा को निरापद स्थान तक पहुंचा दूं।"

इस पर हमीदा ने कहा ,—"मैं यह नहीं चाहती कि आप मेरे वास्ते ज़ियादह तर तकलीफ़ उठावें। फिर आप आज़ाद भी तो नहीं हैं ! ऐसी हालत में आप अपने अफ़सर को अपनी गैरहाज़िरी का क्या सबब बतलाएंगे ? क्या आप उनसे यह कहेंगे कि,—'मैं अपने दुश्मन अफ़रीदी सर्दार की लड़की के साथ गया था !' ऐसा करने से क्या आप अपने अफ़सर के सामने सज़ावार नहीं हो सकते ! इसलिये ऐसा मैं नहीं चाहती कि आप पर मेरे सबब से कुछ आंच पहुंचे ! चुनांचे अब आप अपने पड़ाव को लौट जाइए और यकीन करिए कि मेरे तन में जान रहते, कोई पाजी मेरी बेइज़्ज़ती नहीं कर सकता ! बनिस्बत आपके, मैं अपनी जान ज़ियादह बेशकीमत नहीं समझती, इसलिये अब मस्लहत यही है कि आप लौट जायं।"

अहा ! उस समय उस नारीरत्न पठानकुमारी की बात मैंने जिस भाव में समझी थी, उसे प्रगट करने की शक्ति मुझमें नहीं है ; अस्तु अपने कर्त्तव्य को निश्चय करके मैंने कहा,—"मेरे लिये तुम तनिक भी न घबराओ, क्यों कि मैंने अपने साथियों को पड़ाव की ओर भेज दिया है, ऐसी अवस्था में यदि मैं आज न पहुंच कर कल अपनी छावनी पर जाऊं, तो कुछ भी जवाबदेही मेरे लिये न होगी। इसलिये, सुन्दरी चलो, तुम्हें निरापद स्थान में पहुंचा कर कल मैं अपने पड़ाव की ओर लौट जाऊंगा ; क्योंकि ऐसा मुझसे कभी न होगा कि मैं तुम्हें

इस आपत्ति के चकाबू में अकेली छोड़दूं । ”

मेरे समझाने से अन्त में हमीदा सम्मत हुई । उस समय रात दो घंटे के लगभग बीत गई थी और गहरे अंधेरे के कारण कुछ भी नहीं सूझता था। ऐसे समय में दुर्गम पार्वतीय पथ में चलना कुछ हंसी ठट्ठा नहीं है । अस्तु अबदुल् जंगली लकड़ी के टुकड़े को मशाल की तरह बाल कर आगे आगे चला, बीच में हमीदा हुई और पीछे मैं। उस समय मैं बड़ी सावधानी से चल रहा था; क्योंकि अंधेरी रात, पर्वतप्रदेश, आगे मार्ग दिखलाने वाला अफ़रीदी शत्रु और अपने ऊपर वैरियों के आक्रमण होने का भय;— ये सब कारण ऐसे थे कि जिनसे बहुत सतर्कता के साथ मैं चलता था; किन्तु इतने पर भी उस पठानकुमारी के साथ रहने से मुझे जो कुछ आनन्द मिल रहा था, उससे मार्ग का—बीहड़ पहाड़ी रास्ते का, श्रम मुझे कुछ भी नहीं होता था। ”

निहालसिंह की बातें सुनकर मैंने अट्टहास्य करके कहा,—“बस, मित्र ! इसीका नाम प्रेम है ! ”

यह सुन और मेरे मुंह की ओर देख, हंसकर निहालसिंह ने कहा,— “ मित्र ! इसे “ प्रेम ” कहो, या “ परोपकार ” कहो; अथवा जो चाहे सो कहो, पर यह तुम निश्चय जानो कि उस समय मेरे मन में दूसरा, या कलुषित भाव नहीं था। तुम चाहे सच मानो, या न मानो; इसका तुम्हें अधिकार है; किन्तु मैं इस समय एक सच्ची घटना तुम्हारे आगे कह रहाहूं, जिसका कि प्रमाण मेरे पास है । इसलिये तुम सचहीजानो कि ऐसी अवस्था में, जैसी दशा में कि मैंने हमीदा की रक्षा करके उसका साथ दिया था, इस “ प्रेम ” या “ परोपकार ” का सच्चा रसास्वाद वही जान सकता है, जिसे ऐसा अवसर कभी प्राप्त हुआ हो ! ”

मैंनेकहा,—“ निहालसिंह ! तुम क्या मेरी बातों से कुछ रुष्ट होगए ! आह ! ऐसा न समझो, मैंने जो कुछ तुमसे कहा है, वह शुद्ध भाव से ही कहा है । तुम निश्चय जानो कि तुम्हारी बातों पर मुझे पूरा विश्वास है । अस्तु अब तुम इस कहानी का क्रम पुनः प्रारम्भ करो । ”

निहालसिंह कहने लगे,—“ उस अंधेरी रात में कितनी दूर मैं गया था, यह नहीं कह सकता, किन्तु यह ठीक है कि हमलोग चुप-चाप उस ऊबड़ खाबड़ पहाड़ी की चढ़ाई और उतराई को पार करते, एक पहाड़ी नदी के किनारे किनारे चले जाते थे । उस समय भयानक शीत और बर्फ़ से मेरे हाथ पैर ठिठुरेजाते थे और दम फूल रहा था; परन्तु

हमीद। या अबदुल् का इस कष्ट की ओर कुछ ध्यानही न था ! मानो उनके लिये कुछ था ही नहीं । तुम सच जानो. उस अफरीदी युवती की कष्ट-सहिष्णता के आगे सिक्ख होकर भी मैने हार मानी ! ”

मैने हंसकर कहा,—“ निहालसिंह । यह तो बड़े आनंद की बात तुमने सुनाई ! क्योंकि स्त्री पर, विशेष कर युवती स्त्री पर. विजय पाने की इच्छा करना तो कापुरुषों का काम है । क्योंकि वीर पुरुष तो सदा स्त्रियों से हार माननेमेंही अपना बड़ा धर्म समझते हैं । ”

निहालसिंह इस वक्रोक्ति का कुछ उत्तर न देकर कहने लगे,—“ निदान, आधीरात तक चलने के बाद हमीदा एक पहाड़ी गुफा के पास पहुंच कर ठहर गई और बोली—‘ बहादुर जवान ! आपने मेरे लिये जो कुछ तकलीफ़ गवारा की, इसके लिये मैं आपका शुक्रिया अदा करती हूं । बस, अब आपके ज़ियादह तकलीफ़ करने की कोई जुरूरत नहीं है, इसलिये बाकी रात आप इसी (उंगली से दिखलाकर) खोह में बितावें और सुवह होने पर अपने पड़ाव की ओर चले जावें । यहांसे मेरा किला बहुत नज़दीक है, चुनांचे अब मैं बेखटके वहां तक पहुंच जाऊंगी । ”

इसके बाद उसने अबदुल् को आज्ञा दीकि,—‘खोह के अन्दर सूखे पत्तों का बिस्तरा बिछादे’ यह सुन और एक जलती लकड़ी हमीदा के हाथ में देकर अबदुल् उस खोह के भीतर चला गया और उसके प्रवेश द्वारपर हमीदा मेरे सामने खड़ी रही ! थोड़ी देर चुप रहकर हमीदा ने हाथ की जलती लकड़ी ऊंचीकर और अपने कमर तक लटकते हुए काले काले घुंघुराले बालों को मुंहपर से हटाकर मेरी आंखों से आंखें मिलाईं और बड़ी कोमलता से कहा,—“ अजनबी बहादुर ! आजके पेश्तर मैंने आप ऐसे बहादुर को कभी ख्वाब में भी नहीं देखाथा किजो अपने ऊपर इतनी तकलीफ उठाकर भी अपने दुश्मन की दुखतर पर इतना रहम करे । गो, अभी मेरी उम्र अठारह बरस से जियादह नहीं हुई, है, लेकिन इन्सान की कदर मैं बख़ूबी जानती हूं । आह । आपने जान कर भी अपने दुश्मन की लड़की पर इतनी मिहरबानी की जितनी कि हिन्दुस्तानियों से पानी गैरमुमकिन है। लेकिन मुझे अफ़सोस है कि आप ऐसी खस्लत के होकर भी हम लोगों की आजादी पर नाहक तल्वार उठाएहुए हैं । बडे अफ़सोस की बात है कि जंगल पहाड़ों में रहने वाले हमलोगों की आज़ादी पर नाहक आप लोगों को रश्क होता है,

और उसे मटियामेट करने के लिये आपलोग जीजान से तुले हुए हैं। लेकिन मैं आपको यकीन दिलाती हूं कि जबतक एक भी अफ़रीदी जीता रहेगा, अपनी आज़ादी हर्गिज़ क़ाफिरों के हाथ न बेंचेगा। अगर मौका हो तो आप अपने अफसरों पर यह बात जरूर जाहिर कर दीजिएगा। मैं खयाल करती हूं कि अब शायद आपसे मेरी मुलाकात न हो। और यह भी मैं समझती हूं कि कल सुबह को जब आप यहांसे अपने पड़ाव की ओर जायंगे तो मुमकिन है कि अफ़रीदियों से आपकी मुठभेड़ हो जाय और आप पर कयामत बर्पा हो; इसलिये मैं आपको अपनी एक ऐसी निशानी देती हूं कि जिसके सबबसे आप मुझे हमेशः याद भी रक्खेंगे और अफ़रीदियों से अपने तईं हिफ़ाज़त भी कर सकेंगे।"

यह कहकर हमीदा ने अपने गले से उतार कर एक "याकूती तख़्ती" जो कि सोने की जंजीर में लटकती थी और जिस पर फ़ारसी की एक शेर खुदी हुई थी, मेरे गले में डाल दी और मुस्कुराकर कहा,—"आप एक नेक और ज़वांमर्द शख्स हैं, इसलिये मैं उम्मीद करती हूं कि अपने दुश्मन की भोलीभाली लड़की के इस तोहफ़े के लेने से इनकार न करेंगे, जो कि आपकी सच्ची सिपहगरी का तोहफ़ा कहा जा सकता है।"

मैंने कहा,—"बीबी हमीदा! एक औरत की दीहुई निशानी की अपेक्षा मैं बिपद में अपनी तल्वारही को विशेष और उपयुक्त समझता हूं; और ऐसी दशा में, जब कि मैं असभ्य और नीच अफ़रीदियों की सीमा में घूम रहा हूं।"

यह सुनतेही हमीदा मारे क्रोध के भभक उठी और अपनी आंखों की आग की चिनगारियों से हलाहल उगलती हुई बोली,—"अफ़सोस! तुम बड़े नाकद्रे निकले!"

मैंने कहा,—"बीबी हमीदा! मैं तुम्हारे मन में कष्ट नहीं दिया चाहता, क्योंकि स्त्री के हृदय में कष्ट पहुंचाना बीरता का लक्षण नहीं है; लेकिन मैंने किसी प्रत्युपकार की आकांक्षा से तुम्हारा उपकार नहीं किया है और न मैं किसी इनाम की लालच इतनी दूर तुम्हारे साथ आया हूं।"

मेरी बात सुन कर हमीदा ने एक ठंढी सांस ली और कहा,—अय अजनबी बहादुर! तुम चाहे अफ़रीदी क़ौम को बिलकुल "जाहिल, जंगली, उजड्ड और बेदर्द समझो' लेकिन यह क़ौम एहसान-

फ़रामोश हर्गिज़ नहीं है। तुम यकीन करो कि अफ़रीदी क़ौम अपने साथ भलाई करनेवाले के लिये उस भलाई के बदले में अपनी जान तक दे डालने में कभी मुंह नहीं मोड़ती। मैं एक नाचीज़ औरत हूं, लेकिन जिस ख़ुदा ने इस मिट्टी के पुतले इनसान में जान और मां के थन में दूध दिया है, उसी पाक परवरदिगार ने औरतों के दिल में भी मुहब्बत और एहसानदानी दी है, इसलिये अगर तुम्हारे दिल में मेरा कुछ भी ख़याल हो तो मुझे तुम अपना दोस्त समझो और इस तोहफ़े को अपने दोस्त की निशानी समझ कर कबूल करो। चाहे तुम मेरी क़ौम को कितना ही जाहिल व हेच समझो, लेकिन इसमें कभी उज्र नहीं कर सकते कि जिस ख़ुदा ने तुम्हें बनाया है, अफ़रीदी भी उसीके पाक हाथ से बनाए गए हैं।

हमीदा के तर्क से मैं मुग्ध होगया और देरतक उसकी ओर देखता रहा। फिर बोला,—"सुन्दरी, हमीदा! मनुष्यों की जान लेने का जिन्हें अभ्यास पड गया है, उनकी कठोर जिह्वा से यदि कोई कड़ी बात निकल जाय तो क्या आश्चर्य है! तात्पर्य यह कि अफ़रीदियों के स्वभाव से मैं जानकार नहीं हूं, किन्तु इतना मैं अवश्य कहूंगा कि तुम्हारी ऐसी सहृदय नारीरत्न मैंने आजतक नहीं देखी। तुम पर मेरी कुछ भी अवज्ञा नहीं है, इसलिये यदि मेरे मुख से कोई कड़ी बात निकल गई हो तो उसे तुम क्षमा करना।"

मेरी बातों से हमीदा का क्रोध वा क्षोभ कुछ शान्त हुआ और उसने सिर झुकाकर बड़ी नम्रता से कहा,—"तो तुम अपने मुंह से कहो कि तुमने एक अफ़रीदी औरत के तोहफ़े को दिल से कबूल किया! मैं कोई मामूली औरत नहीं हूं, बल्कि एक नामी गिरामी अफ़रीदी सर्दार की लड़की हूं। मेरे वालिद, यानी अफ़रीदियों के सर्दार मेहरख़ां को कौन नहीं जानता! इसलिये मैं समझती हूं कि तुम्हारे जैसे बहादुर शख्स को मैंने अपनी मुहब्बत का तोहफ़ा देकर कुछ बेजा नहीं किया! क्या मैं उम्मेद करूं कि बहादुर होकर तुम उस औरत के तोहफ़े के लेने से अब इन्कार न करोगे, जो कि बहादुरी और सिपहगरी की तहेदिल से कदर करती हो। भला, बतलाओ तो सही, कि आज तक दुनियां में ऐसा कौन नामी बहादुर हुआ है, जिसने किसी कदरदान औरत के तोहफ़े को तुच्छ और नाकाबिल समझ कर कबूल न किया हो!"

तीसरा परिच्छेद

मैं हमीदा के आगे फिर परास्त हुआ और निरुपाय होकर हमीदा के उस तोहफ़े को मैने स्वीकार किया। मेरी स्वीकृति को सुनतेही हमीदा मारे प्रसन्नता के उछल पड़ी और उसने अपना दहना हाथ मेरे आगे बढ़ा दिया। मैने बड़े उमंग से उसके हाथ को अपने हाथ में लिया और उसे चूम कर उसकी कृतज्ञता का बदला दिया।

आह! उस करस्पर्श में उस समय जिस अनिर्वचनीय सुख का आस्वाद मैने पाया था, उसे जिह्वा से मैं किसी भांति भी व्यक्त नहीं कर सकता।

निदान, हमीदा ने भी मेरे हाथ को चूमा और तब फिर वही हमीदा, जो कि पहिले बड़ीही तेजस्विनी, गर्विता, परुषभाषिणी और कुपिता अफ़रीदी नारी थी, हास्यमुखी, कौतुकमयी, कोमलप्राणा और सरला बालिकासी प्रतीत होने लगी।

इतनेही, में, खोह में पर्णशैया की रचना कर और उसके द्वार पर एक छेद में जलती लकड़ी के टुकड़े को खोंस कर अबदुल् बाहर आया और उसने मुझे भीतर जाकर सो रहने के लिये कहा। उस समय मैं सचमुच बहुत ही थक गया था और भारी शीत के कारण मेरा प्राण ओठों पर नाच रहा था, इसलिये हमीदा को बिदाकर के मैं खोह के भीतर गया और पर्णशैया पर जाकर पड़ गया। यह बात ठीक है कि कभी कभी बहुत परिश्रम करने के बाद जल्दी नींद नहीं आती। सो, मैं भी बहुत देर तक पड़ा पड़ा जागा किया और उस समय न जाने कितनी और कहां कहां की अनाप सनाप बातें मेरे मन में उठने लगीं; किन्तु सभी चिन्ताओं के भीतर मुझे हमीदा ही हमीदा दिखलाई देने लगी। उस समय मैने अपने मन में सोचा कि यदि हमीदा केवल कोमल-स्वाभावा किम्वा केवल परुष-स्वभावा होती तो उसके समान कोमलतामयी किम्वा पाषाणी नारी दूसरी न दिखलाई देती, किन्तु वह तो कठिनता-कोमलता, तेजस्विता-मधुरता, साहस और विनय आदि परस्पर विभिन्न प्रकृति के गुणसमूहों की खान है और उन सभों पर उसका देवतादुर्लभ सौन्दर्य तो बहुत ही अनूठा है। ऐसी अवस्था में उसके लिये किस उपमा की अवतारणा की

जाय, कि जिसने मुझ जैसे नीरस व्यक्ति के कठोर हृदय पर भी अपने अद्भुत प्रभाव को डाल कर मोह लिया ! अस्तु, मैंने मनही मन यही सिद्धान्त किया कि यद्यपि हमीदा अफ़रीदी कन्या है, तथापि वह सिंहनीनारी किसी वीरसिंह के ही उपयुक्त और योग्य है। क्योंकि यद्यपि बहुमुल्य माणिक्य भी लोगों की अज्ञात अवस्था में मिट्टी के नीचे दबा रहता है, तो क्या इससे उसकी ज्योति और मूल्य में कभी न्यूनता होती है ! और उस अवस्था में, जब कि वह किसी योग्य जौहरी के सामने आपड़ता है !

निदान, यही ऊटपटांग सोचते बिचारते मैं कब ऊंघ गया, इसकी मुझे कुछ भी सुधि न रही, क्योंकि मैं बहुत रात तक जागता रहा था, सो एकही नींद में सवेरा होगया और मैंने आंखें खोल कर देखा तो जान पड़ा कि दिन अधिक चढ़ आया है ! यह जानकर मैं उठने लगा तो क्या देखता हूं कि मेरे हाथ पैर डोरी से जकड़ कर बांध दिए गए हैं और तल्वार, बंदूक तथा लाठी पास से गायब हैं !; यह देख कर मैं बड़ा चकित हुआ और सोचने लगा कि यह कैसा उत्पात है ! किन्तु उस समय वहां पर कोई न था, जिससे मैं उस अत्याचार के विषय में कुछ पूछता। लाचार, जैसे का तैसा मैं उसी गुफा में पर्णशैया पर पड़ा रहा।

थोड़ीही देर में उस गुफा के द्वार पर कुछ मनुष्यों के बोल सुनाई पड़े और दो मनुष्य भीतर आकर मुझे घसीटते हुए गुफा के बाहर लेगए। बाहर जाकर मैंने पांच सात मनुष्यों को देखा, जिनमें वह कृतघ्न और पाजी अबदुल् भी था। यह सब कौतुक देखकर असल बात क्या थी, इसके समझने में मुझे देर न लगी और मैंने मनही मन इस बात का निश्चय कर लिया कि यह सारा पाजीपन कमीने अबदुल् का है।

मारे क्रोध के मेरा सारा शरीर थर थर कांपने लगा और मैंने अपनी आंखों से आग बरसाकर उस दुष्ट अदुल् से कहा,—"रे विश्वासघातक, चांडाल, रेरे बेईमान, एहसान-फ़रामोश, कमीने अबदुल् ! कल जो मैंने उन गोर्खे सिपाहियों से तेरी जान और तेरे मालिक की लड़की हमीदा की आबरू बचाई और अपनी जान पर खेल और इतना कष्ट सह कर जो तुम लोगों की रक्षा के लिये मैं यहां तक आया, उसका बदला यही है ! इससे तो यह कहीं अच्छा होता कि कल तू उन गोर्खे सिपाहियों के हाथ से मारा गया होता !"

किन्तु मेरी झिड़की या फिटकार से निर्लज्ज अबदुल् कुछ भी लज्जित न हुआ और कर्कश स्वर से बोला,—" जनाब ! मैं अफ़रीदी सर्दार मेहरखां का फ़र्मांबर्दार गुलाम हूं, चुनांचे उनके हुक्म की तामीली करनाही मेरा फ़र्ज़ है।"

मैंने क्रोध से भभककर कहा,—"पाजी, बेईमान ! तू अपने "फ़र्ज़" के साथ ही जहन्नुम-रसीदः हो।"

इसके अनन्तर वे सब मुझे घेर कर खड़े होगए और उनके लक्षण से यही जान पड़ने लगा कि वे मुझे मार डालेंगे। अस्तु, मैंने कड़ककर कहा,—" निःशस्त्र बैरी को मार डालना, नीच और असभ्य अफ़रीदियों के लिये लज्जा की बात नहीं है, किन्तु पाजियो ! यदि मैं अभी अपनी तल्वार पाऊं तो अकेलाही तुम सभों को काट कर यहीं ढेर कर दूं।"

यह सुनकर उनमें से एकने कहा,—" साहब ! हमलोगों की यह मन्शा नहीं है कि नाहक आपके बदन में हाथ लगावें; क्योंकि जिस तरह आपलोग नाहक आदमी का ख़ून करने पर तुले रहते हैं, वैसा इरादा हमारे सरदार का कभी नहीं है, बस, सिर्फ़ हमलोग आपको कैदी की सूरत में अपने सरदार के सामने लेजाया चाहते हैं; क्योंकि हमारे सर्दार का ऐसाही हुक्म है।"

बस, मैंने समझ लिया कि हाथ पैर बंधे रहने और अपने पास हथियार न रहने की अवस्था में इन पाजियों के हाथ से छुटकारा पाना असंभव है ! अतएव मैंने विपत्ति के समय धैर्य का अवलंबन किया और उनलोगों की ओर देखकर पूछा,—" मुझे कितनी दूर जाना पड़ेगा ?"

यह सुनकर उनमें से एकने कहा,—" यह बात हमलोग नहीं बतला सकते।"

मैंने कहा,—" तो ऐसी अवस्था में यदि मैं तुम लोगों के साथ न जाना चाहूं, तो ?"

उसी अफ़रीदी ने कहा,—" तो सुनिए,—आपको ज़िन्दा, या मुर्दा हालत में हमलोगों को अपने सर्दार के पास हाज़िर करनाही पड़ेगा; क्योंकि उनका ऐसाही हुक्म है।"

इसके अनन्तर उन सभों ने अपने अपने हथियार मुझे दिखलाए, जिन्हें देखकर मैंने धीरता से कहा,—" अस्तु तुमलोगों का अभिप्राय मैंने समझा, किन्तु यह तो बतलाओ कि हाथ पैर बंधे रहने के कारण

म बिना लाठी के सहारे इस दुरारोह पार्वतीय मार्ग में चलूंगा, क्यों कर ! ”

इस पर एक व्यक्ति ने कहा,—“सुनिए, एक बेत के दौरे में आपको बैठाकर उससे आपको डोरियों से बांध देंगे । फिर आपकी आंखों पर पट्टी बांध कर दो अफ़रीदी उसे डोली की तरह उठाकर अपने सर्दार के पास लेचलेंगे । बाकी सिपाही इसलिये आगे पीछे और अगल बगल साथ रहेंगे कि जिसमें आप अगर भागने का ज़रा भी इरादा करें तो फ़ौरन आपकी खोपड़ी उड़ा दी जाय । ”

उनकी इस सतर्कता के वृत्तान्त को सुनकर उस अवस्था में भी मुझे हंसी आई और मैंने कहा,—“ अस्तु, जो कुछ तुमलोगों ने बिचारा हो, या जैसा हुक्म तुम्हें तुम्हारे दुराचारी सर्दार ने दिया हो, तुम लोग वैसाही करो,— लेकिन इतना तो सोचो कि पास शस्त्र न रहने और यहांके पहाड़ी रास्ते का हाल न जानने के कारण मैं भला, भागने का विचार किस बिरते पर करूंगा ? ”

वह अफ़रीदी बोला,—“ खैर, इन हुज्जतों से हमें कोई मतलब नहीं है ।”

यह कहकर वह एक बड़े से बेत के दौरे को लेआया, जो बड़े भारी डोल की सूरत का बहुत ही दृढ़ बना हुआ था और उसमें ऊपर की ओर बांस लगाने के लिये दो बड़े मजबूत लोहे के गोल कड़े लगे हुए थे । निदान, कई अफ़रीदियों ने मुझे उठाकर उसी बेत के झांपे में बैठा कर मेरी आंखों पर पट्टी बांधदी और तब आंख रहते भी मैं पूरा अंधा बन गया ।

फिर मुझे केवल यही जान पड़ने लगा कि मुझे दो, या चार अफ़-रीदी उठाकर पहाड़ की चढ़ाई और उतराई को लांघते हुए बड़ी तेज़ी के साथ किसी ओर को जारहे हैं । उस समय वे सबके सब चुपचाप थे ।

दोपहर ढलते ढलते वे सब एक पहाड़ी झरने के पास पहुंच कर ठहर गए और मुझे उस झांपे में से निकाल और हाथ पैर तथा आंखों को खोलकर उनमें से एक ने कहा,—“ साहब! अगर इस मुकाम पर आपको हाथमुंह धोना कुछ जलपान करना, या कुछ नाश्ता वाश्ता करना हो तो कर लीजिए, क्योंकि दो घंटे आराम करके फ़िर हमलोग यहांसे कूच करेंगे और शाम होने से पेश्तर ही अपने सर्दार के पास पहुंच जायंगे । ”

यह सुनकर मैं अपने मामूली कामों में लग गया और कपड़े उतार कर हाथमुंह धो और अपने पास की थोड़ी सी मेवा खाकर जलपान किया। इतनेमें वे सब भी अपने मामूली कामों से छुट्टी पागए और फिर मुझे पूर्ववत उस झांपे में डाल तथा आंखों पर पट्टी बांध कर चलपड़े।

कई घंटे चलने के बाद वे सब फिर ठहर गए और मैं भी झांपे से निकाला गया। मेरी आंखों पर की पट्टी और हाथ पैर खोल दिए गए, तब मैंने चारों ओर देखकर समझ लिया कि मैं अफ़रीदियों की बस्ती में आगया हूं। जहांतक मेरी दृष्टि गई, मैंने देखा कि चारो ओर आकाश से बातें करनेवाले दुरारोह पर्वत खड़े हैं और उनके घेरे में कई कोस का लंबा चौड़ा मैदान है। घास, पात, बेत और बांस के झोपड़े, जो हर एक दूसरे से बिलकुल अलग अलग थे, बने हुए हैं और उन्हीं में अफ़रीदी रहते हैं। मैंने देखा कि मेरे चारों ओर सैकड़ों अफ़रीदी नरनारी एकत्र होगए हैं और सभी मुझे अचरज की दृष्टि से देख रहे हैं। वे सब, उनलोगों से, जोकि मुझे कैद कर लेगए थे, मेरे विषय में पूछपाछ रहे हैं, जिसके जवाब में वे सब भी कुछ उत्तर देरहे हैं। किन्तु उनसभों की बात चीत में इतने ग्रामीण शब्द मिले हुए थे और उनका उच्चारण इतना द्रुत था कि मैं उनकी भाषा जानने पर भी उस वार्तालाप का बहुत थोड़ा अभिप्राय समझ सकता था, सोभी शब्दद्वारा नहीं, बरन भाव द्वारा। तात्पर्य यह कि वे सब बातें मुझसे ही संबंध रखती थीं और मेरे पकड़े जाने पर सभी प्रसन्न थे।

निदान, संध्या होने से एक घंटे पहिले मैं बहुत ही लंबी चौड़ी एक पहाड़ी बारहदरी में, जोकि बहुत साफ़ और चिकनी थी, पहुंचाया गया और तब मैंने जाना कि उस अफ़रीदी सर्दार का दर्बारगृह या कचहरी यही है। किन्तु उस समय दस बीस अफ़रीदी अमीर वहां पर उपस्थित थे और सर्दार मेहरखां न था। उन अमीरों से यह जान पड़ा कि कल के दरबार में मुझे हाज़िर करने के लिये सरदार ने हुक्म दिया है और आज रात भर जेलखाने की इजाज़त दी है।

इसके अनन्तर वही कमीना अब्दुल् मुझे कुछ दूर पर, एक पहाड़ी खोह के पास ले गया और बोला,—"तुम्हारे लिये इसी जेल का हुक्म हुआ है, चुनांचे तुम्हें आज रात भर यहीं रहना होगा।"

चौथा परिच्छेद

निदान, मैं बिना कुछ उत्तर दिए ही उस अंधेरी और पथरीली गुफ़ा में घुसा, जिसमें न बिछौना था और न ओढ़ना। अस्तु, अपने भाग्य और परमेश्वर पर भरोसा रख कर मैं उसी गुफा में ख़ाली ज़मीन पर बैठ गया और उसके प्रवेशद्वार को अफ़रीदियों ने पत्थर की चट्टान से बंद कर दिया। उस समय मैं मानो अंधकार-समुद्र में डूब गया था और खोह की पथरीली धर्त्ती में मारे जाड़े के हाथ पैर ऐंठे जाते थे। उस समय मेरे मन में तरह तरह की तरंगें उठती थीं और यही जान पड़ता था कि बस, अब मैं कल का सूर्योदय न देखूंगा और मेरी समाधि इसी अफ़रीदी-कारागार ही में हो जायगी। किन्तु, फिर भी मैंने अपने धैर्य को नहीं छोड़ा था। जगदीशबाबू ! न मेरे माता पिता थे और न स्त्री; बस इसी कारण से मुझे कोई चिन्ता न थी, किन्तु उन दुराचारियों के हाथ पशु की मौत मरना पड़ेगा, यह जान कर कभी कभी मेरा कलेजा दहल उठता था।

इसी उधेड़बुन में न जाने कितनी रात बीत गई, इसका ज्ञान उस समय मुझे न था; क्योंकि मैं अंधेरी गुफ़ा में कैद किया गया था। जगदीश बाबू! यह सुन कर तुम अचरज मानोगे, पर बात सचमुच ऐसी ही थी; अर्थात उस अफ़रीदी कारागार में भी मुझ पर निद्रादेवी ने बड़ी कृपा की थी और मैनेदेर तक नींद का सुख लिया था। किन्तु इस सुख में कितनी देर तक मैं मग्न था, यह मैं न जान सका। एकाएक किसी आवाज़ से मेरी आंखें खुल गईं और मैंने हाथ में मशाल लिए हुए एक अफ़रीदी सिपाही को अपने सामने देखा। वह आवाज़ उसी सिपाही की थी, जिसने व्यर्थ मुझे छेड़ कर मेरी सुख की नींद को खो दिया था।

आख़िर, जब मैं नींद से चौंका तो उस सिपाही ने कहा,—"अगर तुम्हें कुछ खाने पीने की ज़रूरत हो तो कहो, उसका इन्तज़ाम कर दिया जाय।"

यह सुन कर मैने कहा,—"दुराचारी अफ़रीदियों के कारागार में रह कर मैं उन्हीं बेईमानों के दिए हुए अन्न जल से अपनी भूख प्यास

बुझाना नहीं चाहता।"

सिपाही,—" ख़ैर, तो यह तुम्हारी ख़ुशी!"

यों कह कर जब वह सिपाही जाने लगा तो मैंने उसे ठहराया और हमीदा की दी हुई उसी 'याक़ूती तख़्ती' को अपने गले से उतार उसके हाथ में दिया और कहा,—" क्या तुम इसे पहचानते हो कि यह क्या चीज़ है?"

यह सुन कर उस सिपाही ने उस तख़्ती को ले कर और मशाल के उंजाले में उसे ख़ूब उलट पलट के देख कर चूम लिया और मेरी ओर आंखें गुरेर कर कहा,—" ओफ़! यह तुम्हारा ही काम था! अफ़सोस! तुम चोरी भी करते हो!

इस विचित्र शब्द को सुनकर मैंने कहा,—" एं! चोरी का शब्द तुमने किस अभिप्राय से कहा!"

उस सिपाही ने कहा,—"अय काफ़िर चोट्टे! यह तख़्ती मेरे सर्दार की लड़की की है। आजही हमलोगों को यह मालूम हुआ कि यह चोरी होगई है। लेकिन बडी ख़ुशी की बात है कि यह माल बड़ी आसानी से बरामद होगया, जिसकी वजह से मैं मालामाल होजाऊंगा।"

मैंने कहा,—" यह तुमने किससे सुना कि यह तख़्ती चोरी होगई है?"

सिपाही,—" यह मैं नहीं बतला सकता।"

मैं,—" किन्तु यह तो तुम सोचो कि यदि मैंने यह तख़्ती चुराई होती तो तुम्हें मैं इसे दिखलाता ही क्यों? और यह भी बात सोचने की है कि जबसे मुझे अफ़रीदी सिपाही कैद करके यहां लाकर बंद कर गए हैं, तबसे भला मैंने इस तख़्ती के चुराने का अवसर ही कब पाया?"

सिपाही,—" तो तुमने अगर यह तख़्ती नहीं चुराई तो यह तुम्हारे पास, आख़िर आई ही कैसे?"

मैंने सोचाकि इसके ठीक ठीक उत्तर देने में हमीदा की सारी बातें कहनी पड़ेंगी, जिन्हें एक सिपाही के आगे प्रगट करना मैंने उचित न समझा; अतएव मैंने कहा,—" तुम्हारे इस सवाल का जवाब मैं नहीं दिया चाहता।"

इस पर उस सिपाही ने कहा,—" ठीक है, तभी तो तुम चोरी की इल्लत में गिरफ्तार करके यहां लाए गए हो, और इस कसूर में अजब नहीं कि तुम्हें कल फांसी दी जाय, या जल्लाद की तेज़

तल्वार तुम्हारे गले पर पड़े । ”

मैंने कहा,—“ ख़ैर, जो होगा, देखा जायगा। बस, तुम इस तख्ती को लाओ, मेरे हवाले करो । ”

सिपाही,—“ अब यह तख्ती तुम्हें लौटाई न जायगी। क्योंकि इस पर तुम्हारा कोई हक जायज़ नहीं है और माल बरामद होनेपर वह फिर चोट्टे को लौटाया नहीं जाता । ”

निदान, यों कहकर वह सिपाही उस तख्ती को लिए हुए उस खोह के बाहर चला गया और बाहर जाकर उसने फिर उस कंदरा के द्वार को बंद कर दिया। मैं पुनः अंधकार-समुद्र में डूबने उतराने लगा और इस बात पर सोच बिचार करने लगा कि यह तख्ती तो हमीदा ने मुझे दी थी, फिर इसके चोरी जाने की बात कैसे फैलाई गई ! ओह, क्या हमीदा ने मुझसे उस उपकार के बदले ऐसा बिश्वास-घात किया !

मैंने ऐसा सोचा तो सही, पर इस बात पर मेरा बिश्वास न जमा और मेरे मानसपटल पर हमीदा सर्वथा निर्दोष ही दिखलाई देने लगी। तब मेरा ध्यान अबदुल् पर गया। इस बात पर चित्त ने भी पूरा बिश्वास कर लिया कि यह सब उसी हरामज़ादे का कमीनापन है। किन्तु इस का तत्व तब तक मैं नहीं समझ सका था कि मेरे उस उपकार के बदले में अबदुल् ने ऐसा नीच प्रत्युपकार किसलिये किया !

अस्तु, इन्हीं बातों को देर तक मैं सोचता रहा, पर सुन्दरी हमीदा पर फिर मुझे मुतलक संदेह न हुआ । किन्तु क्यों न हुआ ? इसका यही कारण है कि प्रायः स्त्रियां बिश्वासघातिनी नहीं होतीं, चाहे पुरुष-जाति कैसीही कृतघ्न क्यों न हो ।

निदान, देरतक मैं अपनी इसी उधेड़बुन में लगा था कि इतने ही में पुनः उस गुफा का द्वार खुला और मशाल का उंजेला भीतर आया। यह देख कर मैं सावधान हो बैठा और आनेवाले की राह देखने लगा। तुरंतही हाथ में एक छोटी सी मशाल लिए हुए हमीदा मेरे सामने आ खड़ी हुई ।

उस समय वह सफ़ेद पोशाक पहरे हुई थी, । उसके एक हाथ में बरछा, कमर में कटार और दूसरे हाथ में वही छोटीसी मशाल थी। उसके मुखड़े से वीरता चुई पड़ती थी और कदाचित क्रोध के मारे उसकी आंखें लाल होरही थीं ।

हमीदा मेरे सामने आकर खड़ीही हुई थी कि उसके पीछे वह सिपाही भी वहां आकर खड़ा होगया, जिसे मैने वह याकूती तख्ती दी थी। उसके हाथमें भी एक मशाल थी। सो उसे अपने पीछे देख, हमीदा ने उससे कहा,—"तू बाहर जाकर खड़ा रह और जबतक मैं यहां रहूं कोई भी इस खोह के अंदर आने न पावे।"

इसपर "जो हुक्म हुज़ूर," यों कहकर सिपाही उस खोह के बाहर चला गया और मैं हमीदा की ओर और वह मेरी ओर देखने लगी। मानो उस समय दोनो ही यही सोच रहे थे कि पहिले कौन बोले और बातों का सिलसिला किस ढब से प्रारंभ किया जाय ! किन्तु जब देर तक मेरा गला न खुलातो हमीदा पत्थर की दीवार के छेद में अपने हाथ की मशाल खोंसकर मेरे सामने जमीनही में बैठ गई और बोली, अय जवांमर्द बहादुर ! बड़े अफ़सोस का मुकाम है कि मुझ कंबख्त के पीछे आप बड़ी आफ़त में फसे ! आह ! मेरी आबरू बचाकर और मेरी ही हिफ़ाज़त के लिये मेरे साथ आकर आप बहुत ही बड़ी मुसीबत में गिरफ्तार हुए। मतलब यह कि इस वक्त मैं आप को जिस हालत में देख रही हूं यह सिर्फ मेरीही बदौलत आप को नसीब हुई है ! अफ़सोस, अफ़सोस ! अब मैं आप को अपना कालामुह क्योंकर दिखलाऊं और कौन से लफ़जों में आपसे माफ़ी मांगू !"

उस सुन्दरी के ऐसे आर्द्र और सहानुभूतिसूचक वाक्य से उस कारागार में रहने पर भी मेरा रोम रोम हर्षित होगया और मैंने बड़ी गंभीरता से कहा—"बीबी हमीदा ! इस विषय में क्षमा मांगने की क्या आवश्यकता है ! अतएव मेरे लिये तुम अपने जीमें कुछ दूसरा विचार न करो और सचजानो कि मुझपर जो कुछ आपदाएं आई हैं, वे सब मेरे कर्मों का फल है ! इस में तुम्हारा कोई अपराध नहीं है मेरे मनमें तुम्हारे ऊपर कोई दूसरा भाव नहीं है !"

यह सुनकर हमीदाने कहा,—"शायद आप अपनी इस आफ़त की जड़ मुझे ही समझते होंगे !"

हमीदा की यह बात मुझे बहुतही कडुई लगी ! और इसे सुनकर मैने बड़ी कड़ाई के साथ कहा,—

"मैं उतना नीच नहीं हूं, जितना कि तुम मुझे समझ रही हो ! अफ़सोस का मुकाम है कि अफ़रीदी कुमारी मेरे हृदय के निर्मलभाव के समझने में सर्वथा असमर्थ है ! हमीदा ! तुम मुझे ऐसाही नीच

समझती हो कि मैं तुम पर संदेह करता होऊंगा ! "

मेरी बातों को सुनकर वह सरलहृदया, बीरनारी, हमीदा बहुतही प्रसन्न हुई और मेरे हाथ को पकड़ कर बड़े स्नेहसे कहने लगी,—" सच कहो, क्या तुम्हारे मनमें मुझपर तो कोई संदेह नहीं है ! "

मैने कहा,—" हमीदा ! तुम निश्चय जानो, मै तुम्हें वैसीही आदर की दृष्टिसे देखरहा हूं , जिस दृष्टिसे कि तुम मुझे देखरही हो ! बस, तुम अपने कलेजे पर हाथ रखकर मेरे जीकाभी भाव समझलो । "

हमीदा,—" तो सचमुच तुम मुझे बेकसूर समझते हो ! "

मैने कहा,—"हमीदा ! यह तुम क्या कह रही हो तुम सच जानो कि मेरे चित्त में तुम्हारे ऊपर कोई संदेह नहीं है । "

हमीदा,—" अब मैं बहुत खुश हुई, लेकिन यह आफ़त तो तुमपर मेरेही सबब से आई ! "

मैने कहा,—" नहीं, कभी नहीं; तुम तो मुझे लौट जाने के लियेही बराबर कहती रहीं, किन्तु मैने बलपूर्बक तुम्हारे साथ आनेका हठ किया था। अतएव तुम इस बिषय में बिल्कुल निरपराधहो और मैं केवल अपने कर्मों का फल भोग रहा हूं। हमीदा ! जिनकी दृष्टि केवल स्वार्थ के ऊपर लगी रहती है, उनसे कभी परोपकार होही नहीं सकता। अतएव यदि मैं विपद से भयभीत होता तो तुम्हारे मना करने पर भी कदापि तुम्हारे साथ न लगता । यद्यपि यह बात मुझे न कहनी चाहिए, पर लाचारी से कहना पड़ता है कि मैं बीरता का अभिमान करता हूं और इसलिये मेरे आगे संपद और बिपद दोनों बराबर हैं; अतएव मैने जानबूझकर इस विपद-सागर में अपने को डाला है, इसलिये तुम इसका कुछ सोच न करो।

" सुन्दरी, हमीदा! मैने सुना है कि तुम्हारे पिताने मुझे कल दरबार में हाज़िर करने की आज्ञा अपने सिपाहियों को दी है। बस, कल वह अफ़रीदी सर्दार देखेगा कि एक सिक्खबीर किस दिलेरी के साथ मृत्यु को आलिङ्गन करता है ! परन्तु, सर्दारपुत्री ! तुम जो इतना कष्ट उठा-कर इतनी रातको इस कैदी के साथ अपनी हमदर्दी ज़ाहिर करने आई हो, इसलिये यह तुम्हे सच्चे जी से असंख्य धन्यवाद देता है। "

मेरी बातें सुनकर उस सुन्दरी ने एक लंबी सांस खैंची और गद-गदाई हुई आवाज़ से इस प्रकार कहा,—

" अजनबी बहादुर ! मैने तुम्हारे साथ ऐसी कोई भी नेकी नहीं

की है कि जिसके एवज़ में तुम मेरा शुक्रिया अदा करो। लेकिन खिलाफ़ इसके तुमने मेरे साथ बहुत बड़ी भलाई की और मेरेही सबब से तुम कैद किए गए। अफ़सोस! इस बात का खयाल जब मुझे होता है तो मेरे कलेजे का ख़ून उबाल खाने लगता है और गुस्से व शर्म के मारे यही जी चाहता है कि बस फ़ौरन अपने तई आप हलाक कर डालूं! मगर खैर, देखा जायगा!

मैंने कहा,—"हमीदा! तुम मेरे तुच्छ प्राण के लिये व्यर्थ इतना पछतावा कर रही हो!"

उसने कहा—"बस, चुपरहो, और मुझे जियादह शर्मिन्दा न करो। लेकिन याद रक्खो कि मैं उसी दिन खुदा के सामने अपना मुंह दिखलाने काबिल हूंगी, जब कि तुम्हें इस कैद से छुटकारा दिला-कर तुम्हें खुशी खुशी अफ़रीदियों की सहद के बाहर कर सकूंगी। लेकिन खैर, इस वक्त इन बातों की कोई ज़रूरत नहीं है। मैं देखती हूं कि थकावट और भूख प्यास के सबब तुम बहुत काहिल हो रहे हो, इसलिये मैं चाहती हूं कि पहिले तुम्हारे खाने पीने का बंदोबस्त करना चाहिए।"

मैंने कुछ रुखाई के साथ कहा,—"मैं वैरियों के यहां कुछ न्योता जीमने केलिये नहीं बुलाया गया हूं, इसलिये मैं भूखप्यास का कष्ट सहलूंगा पर अत्याचारी अफरीदियों की कैद में मैं अन्न जल का स्पर्श भी न करूंगा।"

मेरी बातें कदाचित हमीदा के कोमल हृदय में तीर सी लगीं, जिससे वह ज़रा तलमला उठी और कुछ देरतक सिर झुकाए हुए धर्ती की ओर देखती रही। फिर उसने मेरी ओर देखा और उदासी के साथ यों कहा,—"अय बहादुर, जवान! मुझमें अब इतनी ताक़त बाकी नहीं रह गई है कि मैं तुम्हारी मर्ज़ी के खिलाफ़ कुछ भी कर सकूं। गो, तुम इस बात का यकीन न करो, लेकिन ख़ुदा जानता होगा कि मैं तुम्हारी दुश्मन नहीं हूं, बल्कि आपकी दोस्त और भलाई चाहने वाली हूं। मेरे वालिद और सारे के सारे अफ़रीदी बेशक तुम्हारे जानीदुश्मन हैं, लेकिन तुम्हारे दुश्मन की दुख़्तर होने पर भी मैं इसवक्त तुम्हें अपना दोस्त समझ कर इस बात की आर्ज़ू रखती हूं कि तुम मेरे न्योते को कबूल करोगे और इस बात से इनकार कर मेरी दिल शिकनी न करोगे। मैं समझती हूं कि मेरी आर्ज़ू मान

लेने से तुम्हारी बहादुरी में कोई धब्बा न लगेगा, और तुम्हारे ऐसा बहादुर शख्स एक औरत के न्योते से इनकार करके उसके नन्हे से दिलको न दुखाएगा। ”

जगदीशबाबू ! हमीदा ने उस समय जिस सरलता से ये बातें कही थीं, उसमें कुछभी बनावट नथी, अतएव उसकी उस बिनती की मैं उपेक्षा न कर सका और बोला,—“ सुन्दरी। यदि तुम्हारी ऐसी ही इच्छा है तो मैं सबभांति तयार हूं।”

यह सुनते ही हमीदा उठकर उस कारागार के द्वारपर चली और वहां पर खड़े हुए पहरेदार से कुछ कह कर तुरंत लौट आकर फिर मेरे सामने बैठ गई। थोड़ी ही देर में वह सिपाही एक सुराही ठंढ़ाजल एक गिलास शर्बत कटोराभर दूध, कई रोटियां, मेवे, फल और शराब लाकर और मेरे सामने रखकर बाहर चलागया। मैं भूखा प्यासा तो था ही सो खूब पेट भर मैंने भोजन किया, पर शराब को बिल्कुल न छुवा। मैंने हमीदा से भी अपने साथ खाने के लिये कहाथा, पर उसने इस ढंग और बिनती से उस समय इस बात को अस्वीकार किया कि फिर मैंने उससे विशेष आग्रह करना उचित न समझा।

जब मैं खा पी चुका तो हमीदा के सीटी बजाने पर वही सिपाही आकर जूठे बर्तन उठा लेगया और एक खूब मोटा कंबल देगया! वह कंबल दो अंगुल मोटा था और इतना लंबा चौड़ा था कि जिसे बिछा कर बीस पच्चीस आदमी सो सकते थे। सो मैंने कंबल को बिछाया और उसपर हमीदा भी बैठी और मै भी बैठा।

हाथ की मशाल हमीदा ने एक छेद में खोंस दी थी, उसीके धुंधले उंजाले में मैं उसके सरलतामय मुखड़े को देखकर उस कारागार में भी किसी अनिर्वचनीय सुख का अनुभव करता था।

हमीदा कहने लगी,—“ तुम मेरे सिपाहियों के हाथ क्योंकर या कहां पर गिरफ्तार हुए, इसका मुझे अबतक ठीक ठीक हाल नहीं मालूम हुआ। मैंने अभी तुम्हारी गिरफ्तारी का हालसुना, लेकिन वह अधूरा था इसलिये तुम मेहर्बानी कर के इसका खुलासा हाल मुझे सुनाओ।”

इस पर मैंने अपने पकड़े जाने का सारा हाल उसे सुनाया, जिसे सुन कर वह बहुत ही क्रुद्ध हुई और कहने लगी,—“ ओफ़ ! यह पाजी-पन उसी नुत्फ़ेहराम अबदुल का है ! अफ़सोस ! उस हरामज़ादे ने बड़ी दगा की ! खैर, मेरा हाल सुनो,—मैं तुम से विदा हो कर अबदुल

के साथ इस ओर को चली आती थी कि थोड़ीही दूर जाने पर मुझे दस बारह आदमी मिल गए, जो मेरे वालिद के नौकर थे, और मेरीही खोजके लिये भेजे गए थे। खैर, तब मैं तो दो तीन आदमियों को साथ लेकर इधर आइ और बाकी आदमियों को साथ लेकर और किसी ज़रूरी काम का बहाना करके बदज़ात अबदुल दूसरी ओर चला गया। अफ़-सोस। मैं यह क्यों कर जान सकती थी कि यह हरामज़ादा इसी ज़रूरी काम के लिये जा रहा है! वरन मैं हर्गिज़ उसे अपनी नज़रों से दूर न करती और सुबह होने पर तुम बे खटके अपने पड़ाव पर पहुंच जाते। अफ़सोस। तुमने अबदुल के साथ जैसी नेकी की थी, उसी का एवज़ उसने इस बदी से अदा किया।"

मैंने कहा,—"निस्सन्देह, अब्दुल् की दुष्टता के कारण ही मैं बंदी हुआ। यह बात मैंने उसी समय समझ ली थी, जबकि उसे मैंने अपनी गिरत्फारी के वक्त बड़ी मुस्तैदी के साथ मौजूद देखा था। किन्तु इसका कारण मेरी समझ में अभी तक न आया कि उस कमीने ने मेरे साथ भलाई के बदले ऐसी बुराई क्यों की?"

यह सुनतेही हमीदा का चेहरा लाल हो गया और मानो उसने किसी लज्जा के कारण अपना सिर झुका लिया हो! देर तक वह सिर झुकाए हुए कुछ सोचती रही, फिर उसने सिर उठाकर मुझसे आंखें मिलाईं और इस प्रकार कहना प्रारंभ किया,—"शायद अब्दुल के इस कमीने पन की वजह तुम नहीं जानते, लेकिन मैं इसका सबब बख़ूबी जानती हूं। मैं यह बात तुम पर कभी ज़ाहिर न करती, लेकिन अब उसका ज़ाहिर करनाही मैं मुनासिब समझती हूं। मैंने जो तुम को अपनी मुहब्बत की निशानी वह तख्ती दी थी, शायद उसे अब्दुल् ने देख और मेरी बातों को सुन लिया होगा। बस, यही वजह है कि तुम पर मेरी मुहब्बत जान कर वह कंबख्त दिलही दिल में जल भुन कर कबाब हो गया और तुम्हारी जानका गांहक बनगया। इस वक्त मैं शर्म को दूर रखकर तुमसे साफ़ कहती हूं कि वह पाजी अब्-दुल मेरे इश्कमें दीवाना हो रहा है, यह बात मैं जानती हूं, लेकिन आजतक मारे ख़ौफ़ के वह अपनी ज़बान से इस बारे में कुछ भी जाहिर नहीं कर सका है। मैं उसे मुतलक़ नहीं चाहती, लेकिन जब कि उसने तुमपर मेरी मुहब्बत देखी, तो वह जीहीजी में बहुतही कुढ़ा और जलभुन कर उसने यह बद कार्रवाई की। ऐसा करने से उसने यही

नतीजा निकाला है कि अगर इस कार्रवाई से वह मेरे बापको खुश कर सके तो मेरे पाने की दर्खास्त करे ! लेकिन मै उसपर थूकूगीं भी नहीं, मुहब्बत करना तो दूर रहा; ऐसी हालत में मेरा वालिद मेरी मर्ज़ी के खिलाफ़ हर्गिज़ कोई कार्रवाई न करेगा । इसी सिपाही की ज़बानी, जिसे तुमने यह तख्ती दिखलाई थी और जो मेरे पास इसे लेगया था, मैंने तुम्हारी गिरफ्तारी का हालसुना कि तुम्हें अबदुल्‌ ने इसी तख्ती के चुराने के कुसूर में गिरफ्तार किया है और यहां पर इस बातको उसने हर खासो आप में बड़ी सरगर्मी के साथ मशहूर किया है । ”

मैंने कहा,—“ किन्तु, हमीदा बीबी ! मैंने तो वह तख्ती इसीलिये उस सिपाही को दिखलाई थी कि जिसमें वह मुझे छोड़ दे और मैं यहां से चलाजाऊं । क्योंकि उस तख्ती का यही गुण तो तुमने बतलाया था ! यदि मैं ऐसा जानता कि उस तख्ती के दिखलाने से इतना उपद्रव होगा तो मैं उसे कभी न दिखलाता । ”

हमीदा ने कहा,—“ मुझे इस बातपर पूरा यक़ीन था कि इस तख्ती के बदौलत तुम सब आफ़तों से बचकर अफ़रीदी सिवाने से पार हो-जाओगे, लेकिन तुम्हें तख्ती देने का हाल कंबख्त अब्दुल् ने जान लिया, इसीसे उस सिपाही ने तख्ती देखकर भी तुम्हें न छोड़ा, और ऐसी हालत में जब कि तुम कैद होकर यहां तक लाए जा चुके थे। अगर तुम तख्ती को इस वक्त उस सिपाही को नभी दिखलाते, तौभी दरबार में तुम्हारी तलाशी ज़ुरूर लीजाती और उस वक्त तुम्हारे पास से वह तख्ती ज़रूर बरामद होती । इससे तो कहीं अच्छा हुआ कि तुम उस चोरी के इल्ज़ाम से बिलकुल बेलाग बचगए और मेरी तख्ती मेरे पास पहुंचगई। अब अगर अब्दुल या वह सिपाही, जिसने यह तख्ती तुमसे लेकर मुझे दी थी, तुमपर तख्ती के चुराने का इल्ज़ाम लगावेंगे भी तो मैं उनदोनो को बिल्कुल झूठा साबित कर दूंगी और अपने बाप को दिखला दूंगी कि मेरी तख्ती मेरे गले में मौजूद है और यह कभी मुझसे जुदा नहीं हुई थी । ”

मैंने कहा,—“ किन्तु, हमीदा मुझ पर चाहे जैसी विपत्ति आती पर मैं कदापि तुम्हारे उस ‘प्रेमोपहार’ (तख्ती) को अपने पाससे दूर न करता और सिपाही को वह तख्ती कभी न दिखलाता यदि मैं जानता कि यह इस तख्ती को फिर मुझे न लौटावेगा । खेद है कि तुम्हारे ‘प्रेमोपहार’ की रक्षा मैं न कर सका ।”

यह सुनकर हमीदा फड़क उठी और उसने हंसकर कहा,—"प्यारे दोस्त ! तुम्हारी दिलेरी और कदरदानी की बात सुन कर मैं निहायत खुश हुई। वाकई, मैने अपनी मुहब्बत की निशानी (वह तख्ती) किसी एहसानफरामोश नालायक को नहीं दीथी । लेकिन, दोस्त ! यह अच्छा हुआ कि इस वक्त ऐसे खतरे के वक्त तख्ती तुम्हारे पास से मेरे पास चली आई। बस, कल जब दरबार में तुम चोरी के कसूर से बरी होकर जाने लगोगे तो यह तख्ती मैं फिर तुम्हें पहिनाकर बिदा करूंगी। अफ़सोस ! काफ़िर, बदजात, झूठे, बेईमान, हरामजादे, खुद-गरज, एहसानफ़रामोश और पाजी अबदुल ने जिस गरज़ से तुम्हें इतना परीशान किया है, उस कंबख्त की यह आर्जू ताकयामत हर्गिज पूरी न होगी, क्योंकि जैसी बदज़ाती उस बेईमान अबदुल ने की है, अगर सुलतान-ई-रूम भी वैसी हर्कत करके हमीदा के दिलपर कबज़ा किया चाहेतो यह (हमीदा) उसपर भी कभी न थूकेगी। क्योंकि मैं जितनी कद्र बहादुरी और सिपहगरी की करती हूं बेईमानी, खुदगरजी और एहसानफ़रामोशी से उतनी ही नफ़रत भी करती हूं। बस, कल तुम कह देना कि मैने तख्ती नहीं चुराई।"

मैने कहा,—"हां, तो मै अवश्य कहूंगा, किन्तु मैं तुमसे उस तख्ती के पाने और उस सिपाही के दिखलाने से इनकार कदापि न करूंगा।"

हमीदा,—(घबरा कर) "आह ! तब तो तुम सब मिट्टी कर दोगे इसलिये मस्लहत यही है कि तुम उस तख्ती के पाने या उस सिपाही को देनेसे बिल्कुल इनकार करो।"

मैने कहा,—"हमीदा ! हाय, यह तुम्हारे जैसी बीरनारी के मुंह से यह मैने क्या सुना ! हाय, इस तुच्छ प्राण के बचाने के लिये तुम मुझे झूठी हलफ़ उठाने की सिक्षा देतीहो ! किन्तु सुन्दरी ! तुम निश्चय जानो कि सिक्खवीर जितना झूठ से डरते हैं उतना मृत्यु से कदापि नहीं डरते, वरन उसे महातुच्छ समझते हैं।"

मेरी यह बात सुन कर हमीदा मारे खुशी के उछल पड़ी और कहने लगी,—"जानिमन सलामत ! ऐसा तुम हर्गिज़ मत समझना कि हमीदा दिलकी कमज़ोर है या यह तुम्हें झूठ बोलने के लिये मज़बूर किया चाहती है। नहीं, ऐसी बात कभी नहीं है। अजी साहब ! मै तो सिर्फ़ तुम्हारे दिल का इम्तहान ले रही थी, । ऐसी हालत में अगर तुम मेरी वह बात मान लेते तो बेशक तुम मेरी नज़रों से गिरजाते लेकिन ऐसा

क्यों हो। वाकई ख़ुदा ने मेरे दिल को एक अच्छे दिलेर शख़्स के ताबे किया है, इसके लिये मैं तहेदिल से उसका शुक्रिया अदा करती हूं!"

यों कह और अपने गलेसे उतार कर हमीदा ने वह तख़्ती मेरे गले में डालदी और जोश में आकर कहने लगी,—"प्यारे! मैं कल भरे दरवार में अपने बापके आगे यह बात कह दूंगी कि इस ज़वामर्द जवान पर मैं शैदा हूं और यह तख़्ती मैने खुद इसे अपनी मुहब्बत की निशानी के तौर पर इसके नज़र की है।

अहा! उस समय, जबकि हमीदा ने उस तख़्ती को दोबारे मेरे गले में डाली थी, मेरी विचित्र दशा हो गई थी। उस समय उस सुन्दरी की भुजा का स्पर्श जब मेरे गले से हुआ था और उसके उष्ण विश्वास मेरे मुख में लगेथे उनसे यही जान पड़ता कि मानो खिली हुई पारिजात-कुसुम की लता ने मेरा आलिङ्गन किया और उस पुष्प समूह की मत्त-करी सुगन्धि ने मेरे चित्त को हर लिया! अहा! यह कौन जानता था कि आसन्न मृत्यु के अवसर में उस भयंकर अफ़रीदी कारागार में भी अलोक सामान्य सुन्दरी का प्रेमालिङ्गन मुझे प्राप्त होगा।"

निहालसिंह की रहस्य पूर्ण कहानी को सुन कर मैं वहुत ही चकित हुआ और बोला,—"भई, निहालसिंह! तुम बड़े भाग्यवान हो।"

निहालसिंह ने कहा, सचमुच, जगदीशबाबू। मेरे भाग्यवान होने में कुछभी सन्देह नहीं है। अस्तु, सुनो— जिस समय हमीदा मेरे गलेसे लपट गईथी और मैंने उसके और उसनें मेरे कपोलों का स्नेहपूर्वक चुंबन किया था, उस समय एक विचित्र घटना-संघटित हुई थी अर्थात ठीक उसी समय एक उद्वेजक अट्टहास्य-ध्वनि सुनकर हम दोनो एक दूसरे के आलिङ्गन से पृथक हुए आंखे उठा कर हम दोनो ने देखा कि डाह की आग में ताव पेंच खाता हुआ कमीना अब्दुल् गुफ़ा के भीतर घुस आया है और आंखें गुरेर कर हम दोनो की ओर देख रहा है। उसे देखते ही मैं तो केवल उसे "कमीना पाजी" कह कर चुप हो गया, पर हमीदा ने बेतरह त्योरी वदल और कड़क कर कहा,—

"बदज़ात तू किसके हुक्म से इस वक्त यहां आया!"

यह सुन अबदुल् ने ताने से कहा,—"बीबी हमीदा! यह मुझे नहीं मालूम था इस वक्त आप तख़्लिये में एक काफ़िर कैदी के साथ इश्क मज़ाकी का मज़ा लूट रहीं हैं, वरन बगैर इत्तला कराए, हर्गिज़ अन्दर आने की गुस्ताख़ी न करता। लेकिन निहायतही अफ़सोस का

मुकाम है कि सर्दार मेहरखां की लड़की एक गैरमज़हब, काफ़िर अपने मुल्क के दुश्मन और अजनवी शख्स के इश्क में दीवानी हुई है और वह हया व शर्म को ताक पर धर कर ऐसी शोखी के साथ उसपर अपना इश्क ज़ाहिर कर रही है ! इसके बनिस्बत तो कल आप अगर उन काफ़िरों के हाथ, जिन्होंने कि कल आप पर हमला किया था, मर गई होतीं तो कहीं अच्छा होता। अफ़सोस ' लुंडीकोतल ' के नामी सर्दार मेहरखां की नेकखस्लत दुख्तर की यह बेशर्मी ! लानत है इस इश्क पर और हज़ार लानत है ऐसे आशिक पर। "

यह सुनते ही हमीदा ऐसी तेज़ी के साथ उठ खड़ी हुई, जैसे बाण-विद्धा सिंहिनी और पुच्छविमर्दिता सर्पिणी अत्यंत कुपित होकर उठती है।

निदान, हमीदा ने उसकी ओर तुच्छ दृष्टि से देख कड़क कर कहा,—"हरामज़ादे, पाजी, बदज़ात ! मेहरखां के एक नाचीज़ गुलाम को भी इतना हौसला हुआ है कि वह कंबख्त अपने मालिक की लड़की की नसीहत करे ! मगर खैर, तेरी इस शोखी की सज़ा तो मैं तुझे अभी देती; लेकिन नहीं, इस वक्त तो मैं तुझे छोड़ देती हूं, पर तू याद रख कि वह वक्त दूर नहीं है जब कि मेरी छुरी तेरे कलेजे का ख़ून पीएगी और तेरे तन की बोटियां चील कव्वों की ख़ुराक बनेंगी ! बस, तू फ़ौरन यहां से अपना मुंह काला कर, वरन मैं अभी तेरा काम तमाम कर दूंगी।"

यों कह कर हमीदा ने अब्दुल पर थूका और तेज़ी के साथ अपनी कमर से उस कातिल छुरे को खैंच लिया। उस छुरे को देखतेही डरपोक अबदुल एक दम पीछे हटा और गुफा के द्वार पर जाकर फिर कहने लगा,—"आह, अफ़सोस! आप मुझे जान का डर क्या दिखलाती हैं! क्या यह बात आप भूल गईं कि अफ़रीदी बहादुर मौत से डरतेही नहीं; लेकिन ऐसी बात अगर आपने कहा तो कोई ताज्जुब न करना चाहए, क्योंकि इस वक्त आप बेख़ुदी के आलम में मुबतिला हैं। मगर खैर, आप यकीन कीजिए कि मैं मौत से डरनेवाला नहीं हूं, लेकिन तौ भी अपने सर्दार की लड़की को मैं एक काफ़िर के इश्क में दीवानी देखकर चुप होजाऊं, यह मुझसे हर्गिज़ न होगा। बीबी हमीदा ! इस वक्त तुम मुझपर चाहे जितनी तेज़ी झाड़लो, लेकिन कल जब भरे दरबार में मैं तुम्हारी बदचलनी का इज़हार दूंगा, तब तुम देखना कि तुम्हारी छुरी मेरा काम तमाम करती है, या जल्लाद की पैनी तल्वार तुम्हारा या तुम्हारे बदज़ात आशिक का ! ! !"

इतना कह कर अबदुल तेज़ी के साथ उस गुफ़ा के बाहर चला गया ; तब हमीदा ने 'कादिर कादिर' कह कर कई आवाज़ें दीं, पर बाहर से किसीने कोई जवाब न दिया। यह देख कर हमीदा उठ खड़ी हुई और अपनी मशाल अपने हाथ में लेकर कंदरा के बाहर चली। मैंभी उसके साथ साथ कंदरा के द्वार तक आकर ठहर गया। हमीदा कंदरा से बाहर हुई और बाहर जाकर उसने एक अफ़रीदी को एक पेड़ से जकड़ कर बंधा हुआ पाया। यह वही व्यक्ति था कि जिसे मैंने वह याकूती तख्ती दी थी और जिसे हमीदा ने 'कादिर कादिर' कह कर पुकारा था।

निदान, हमीदा ने उसके बंधनों को खोल दिया और पूछा,—"तुम्हारी यह हालत कैसे हुई ?"

इस पर कादिरने पहिले अदब से झुक कर हमीदा को सलाम किया और फिर इस प्रकार कहना प्रारंभ किया,—" हुज़ूर ! आपने मुझे यह हुक्म दिया था कि,-'जब तक मैं इस खोह में रहूं, बगैर मेरी इजाज़त कोई शख्स इसके अन्दर न आने पावे' लिहाज़ा, मैं पहरे पर मुस्तैद था कि यकबयक अबदुल आया और इस खोह के अन्दर जाने लगा। मैंने उसे रोका और खोह के भीतर जाने देने से इनकार किया। आख़िर वह लौट गया और फ़ौरन ही कई आदमियों के साथ आकर उसने मुझे इस पेड़ के साथ बांध दिया। इसके बाद अबदुल के साथी, जिनके चेहरों पर नकाबें पड़ी हुई थीं; एक ओर को चल गए और वह इस खोह के अंदर गया।"

यह सुनकर हमीदा ने अपने कुर्ते के ज़ेब से निकालकर कई अशर्फ़ियां उस सिपाही के हाथ पर धरीं और मेरी ओर स्नेहपूर्वक देखकर वह एक ओर को चली गई। उसके जाने पर उस खोह का द्वार पूर्ववत बंदकर दिया गया।

उस अफ़रीदी कैदख़ाने में फिर मुझे चिन्ताओं ने घेर कर सताना प्रारंभ किया और मैं भांति भांति के सोचविचारों के समुद्र में डूबने उतराने लगा। मैंने उस एक ही रात्रि को जैसे जैसे तमाशे देखे थे और जैसी जैसी बातें सुनी थीं, उनसे मेरा विस्मय बराबर बढ़ता ही गया। उस समय मुझे यही जान पड़ने लगा था कि मानो मैं 'अलिफ़लैला' की हज़ार रातों में से किसी एक रात्रि का नायक बनाया गया हूं और किसी कल्पनामयी सुन्दरी के प्रेम में डूबकर किसी दानवनगरी के पाषाणमय कारागार में बंदी किया गया हूं ! किन्तु जगदीशबाबू !

उस समय का वह कल्पनामय स्वप्न आज सत्य होगया है और तुम्हारे कथनानुसार मैं सचमुच अब अपने को बड़ा भाग्यवान समझ रहा हूं।

किन्तु उस समय मेरे बाहर भीतर—चारोओर अंधकारही अन्धकार था और मैं मानसिक पीड़ा से बिकल हो, रहरह कर हमीदा को पुकार उठता था, परन्तु उस समय वहां पर हमीदा थी कहां, जो मेरे प्रश्ण का उत्तर देती ?

थोड़ी देर के अनन्तर जब मेरा चित्त कुछ स्वस्थ हुआ और मैंने चिन्ताओं के उत्पात से कुछ छुटकारा पाया तो उसी अन्धकारमय कारागृह में एक ओर पड़ रहा और पड़ा पड़ा सोचने लगा कि क्या बदज़ात अबदुल् सचमुच भरे दरबार में अफ़रीदी सर्दार के सामने उसकी लड़की (हमीदा) का अपमान करेगा; और क्या मेरी ही भांति इस वीरनारी को भी किसी भयानक दंड की कठोरता झेलनी पड़ेगी ?

किन्तु सोचसागर में पड़कर मुझे किसी ओर भी किनारा नहीं दिखलाई देता था, अतएव एक ठंढी सांस भर कर मैंने निद्रादेवी का आवाहन करना प्रारंभ किया। बड़ी बड़ी आराधनाओं से भी निद्रा तो न आई,पर उसने अपनी छोटी बहिन तंद्रा को अवश्य भेज दिया,जिसकी गोद में पड़कर मैं हमीदा के प्रेमपूर्ण स्वरूप का दर्शन करने लगा।

अहा ! उस तंद्रामय स्वप्न में मुझे एक ओर सुख दिखलाई देता था, और दूसरी ओर दुःख; एक ओर मृत्यु की भयंकरी मूर्त्ति नृत्य करती हुई दीख पड़ती थी और दूसरी ओर अमृत; एक ओर जागरण, क्लेश, बन्धन और पराधीनता मुझे घेर रही थी और दूसरी ओर तंद्रा के मोह में सुख की मृगमरीचिका, हमीदा का प्रेम और स्वर्गराज्य की उज्वल किरणें दिखलाई देती थीं। मैने उसी तंद्रामय स्वप्न में देखा कि हमीदा मेरे गले से लपटी हुई मेरे कपोलों का स्नेहपूर्वक चुंबन कर रही है ! आह ! उस अफ़रीदी कैदख़ाने में भी स्वप्न ने मुझे ऐसे सब्ज़बाग़ दिखलाए थे ! ! !

पांचवां परिच्छेद

प्रातःकाल पहरेवाले की आवाज़ से मेरी तंद्रा दूर हुई और उससे मैंने सुना कि मुझे दरबार में हाज़िर करने को सरदार ने हुकम दिया है। अतएव मैं शीघ्रता से उठा और गुफा के बाहर आकर आवश्यक कामों से छुट्टी पा, सिपाहियों के घेरे में दरबार की ओर चला। उस समय दिन कुछ अधिक चढ़ आया था, पर आकाश में कुहरा इतना छाया हुआ था कि सूर्य भगवान का दर्शन दुर्लभ था।

अस्तु, मैं अंतर्यामी बिधाता को प्रणाम कर दरबार की ओर चला और मन ही मन परमेश्वर से यही प्रार्थना करने लगा कि जिसमें वह दीनदयालु मेरे हृदय में ऐसा बल दे कि जिसके कारण मैं इन असभ्य अफ़रीदियों के आगे अपने सिक्ख नाम का गौरव रख सकूं।

दरबार गृह कैसा था, इसकी सूचना मैं पहिले दे आया हूं। सो उसी बारहदरी में मैं पहुंचाया गया और वहां जाकर मैंने देखा कि दरबार गृह के मध्य में एक ऊंचे सिंहासन पर अफ़रीदी सर्दार मेहरख़ां बैठा है और उसके अगल बगल अदब के साथ झुके हुए अस्सी दरबारी अमीर ज़मीन में, फ़र्श पर बैठे हुए हैं।

सर्दार मेहरख़ां का बयस, मेरे अनुमान से पचास के लग भग होगा। उसकी देह लंबी और जोरावर, चेहरा रोबीला और शरीर का रंग गोरा था। उसके सिंहासन के पीछे बीस सिपाही नंगी तलवार लिए खड़े थे और दरबार गृह के सामने, मैदान में पचास सवार खड़े थे।

निदान, मैं जब सरदार के सामने जाकर खड़ा हुआ तो मेरे पीछे बारह अफ़रीदी सिपाही, हाथों में भरी हुई बंदूकें लेकर खड़े हुए कि जिसमें सरदार के ज़रासा इशारा पातेही वे मेरी खोपड़ी उड़ादें। अस्तु, परन्तु मैं बिलक़ुल निडर हो, तन कर बीरपुरुष की भांति सरदार के सामने खड़ा हुआ। उस समय दरबार में इतना सन्नाटा छाया हुआ था कि यदि वहां पर एक सुई भी गिरती तो उसका भी शब्द स्पष्ट सुनाई देता।

मेरे खड़े होने के कई मिनट बाद, उस सन्नाटे को तोड़कर सरदार मेहर ख़ांने मेरी ओर घूर कर गंभीर शब्दों में कहा,—"अय नौजवान!

तेरा नाम क्या है ? क्योंकि तेरी पौशाक देखकर मुझे ऐसा जान पड़ता है कि शायद तू सिक्खरेजीमेन्ट का सिपाही होगा ! ”

यह सुनकर और ख़ूब तन कर मैंने वीरताव्यंजक शब्दों में कहा,—“सर्दार मेहरख़ां। मैं अन्यायपूर्वक तेरे हाथों बंदी हुआ हूं, अतएव मैं उस दंड की प्रतीक्षा करता हूं, जो कि तू मुझे दिया चाहता है। बस, इसके अतिरिक्त इस समय नाम, धाम, पेशा, मज़हब, या जातपांत के पूछने की या उनके कहने की मैं कोई आवश्यकता नहीं समझता। ”

कदाचित मेहरख़ां ने अपने प्रश्न का ऐसा मुहंतोड़ उत्तर कभी न पाया होगा ! और कदाचित उसने मुझसे ऐसे उत्तर पाने की कभी कल्पना भी न की होगी। सो मेरे कड़े जवाब को सुनकर वह मारे क्रोध के भभक उठा और कड़क कर बोला,—“ बेवकूफ़, काफिर ! तेरे इस बेहूदगी के जवाब से तेरा ही नुकसान होगा, इसलिये शाहदिरबार में कैदी को जिस नर्मी के साथ जवाब सवाल करना चाहिए, इसे तुझे ज़रूर जान लेना चाहिए। ”

किन्तु उस अफ़रीदी सरदार के इस कहने से मैं बिचलित न हुआ और मैंने भी उसी प्रकार कड़क कर कहा,—“ मेहरख़ां ! असभ्य अफ़-रीदी पठान को मैं अपना राजा नहीं समझता, और साथही इसके, राजाओं के आगे कैसे शिष्टाचार की आवश्यकता होती है, इसे मैं भली भांति जानता हूं। ”

मैंने समझा कि मेरे इस उत्तर से सरदार और भी तमतमा उठा, पर उसने अपने उमड़ते हुए क्रोध को भीतरही भीतर रोक कर कर्कश स्वर से कहा,—“ काफ़िर ! क्रिस्तानों के कदमों की धूल से जिनका माथा भर रहा है,उन्हें इतनी शेखी के साथ तनकर ऐसा जवाब सवाल न करना चाहिए। तू अभी निरा छोकड़ा है, इसलिये लड़कों की तरह जवाब सवाल कर रहा है, लेकिन, ऐसा करना तुझे फबता नहीं। क्या तू इस तवारीख़ी बात को बिल्कुल भूल गया कि इन्हीं ‘ असभ्य ’ पठानों के हाथ से तेरी ज़ात(सिक्खों) को कितनी मर्तबः बेइज़्ज़त होना पड़ा है और कितनी दफ़ा उन्हें पंजाब को छोड़ कर इधर उधर जंगल पहाड़ों में भाग कर अपनी जान बचानी पड़ी है! आज तू उसी (असभ्य) पठान ज़ात के सरदार के सामने कैदी की हैसियत से खड़ा किया गया है, पस, तुझे लाज़िम है कि तू अब सम्हल कर मेरे सवालों का जवाब देगा। ”

मैंने उसकी इन बातों का कुछ भी जवाब न दिया, तब वह फिर कहने लगा,—" क्या तू यह जानता है कि तू किस कसूर में गिरफ़्तार हो कर यहां लाया गया है ?"

" मैंने निडर हो कर कड़ाई के साथ कहा,—" हां, यह मैं भली भांति जानता हूं कि मैंने गोर्खे सिपाहियों के हाथ से जो अफ़रीदी सरदार की लड़की की आबरू बचाई है और उन्हीं गोर्खों की पैनी छुरी से एक एहसानफ़रामोश, पाजी अफ़रीदी युवक की जान बचाई, है, बस, इसी अपराध में मैं बंदी करके यहां लाया गया हूं। निस्सन्देह, मेरा अपराध बड़ा भारी है। यदि ऐसी भलाई मैं असभ्य अफ़रीदी जाति के साथ न करता तो वह मेरे साथ ऐसे प्रत्युपकार की व्यवस्था किसलिये करता ! सच है, नीचों के साथ भलाई करने का नतीजा ऐसा ही निकलता है।"

मेरी बातें सुनकर मेहरखां कुछ देरतक चुप रहा, फिर वह कहने लगा,—"सुन काफ़िर! आज मुझे यह जानकर बड़ी खुशी हुई कि अफ़रीदियों के बनिस्वत हिन्दुस्तानी लोग ज़बांदराज़ी में बड़े बहादुर होते हैं। लेकिन हमलोग बातों के बदले मैदान में,—लड़ाई के मैदान में बहादुरी दिखलाना मुनासिब समझते हैं। ख़ैर, तू अपने ख़ुदा का शुक्रिया अदा कर कि ऐसे बेहूदः जवाब सवाल करने पर भी अभी तक मेरे धड़ पर सर कायम है !

'' सुन, काफ़िर, जवान ! तुम लोगों ने नाहक हमारे मुल्क में आकर लड़ाई का डंका बजाया, नाहक हमारे सैकड़ों बहादुरों की जानें लीं और नाहक इस बेहूदा सर्कशी करने पर तुम उतारू हुए; क्या तुम अफ़रीदियों को बिल्कुलही नाचीज़ व पस्तहिम्मत समझते हो कि जिसके सबब वे तुम्हारी इस शरारत का बदला न चुका सकेंगे! मगर ख़ैर तुझजैसे एक नाचीज़ कीड़े के मारने से मुझे क्या हासिल होगा। इसलिये दुश्मन जानकर भी मैं तेरी जान का ख्वाहां नहीं हूं, लेकिन सिपहगरी के घमंड से लड़ने आकर जो तूने मेरी दुख्तर की याक़ूती तख्ती चुराई, तेरा यह कसूर कभी मुआंफ़ नहीं कियाजासकता। पस, तू इस कसूर के एवज़ में मुनासिब सज़ा भोगने के लिये तैयार हो।"

यह सुनकर मैंने बिल्कुल लापरवाही के साथ कहा,—"सुन मेहरखां! बिना अपराध भी मैं, उस दंड के भोगने के लिये तैयार हूं, जिसे तुझ जैसे नालायक मुझ जैसे निरपराधियों को दिया करते हैं। क्योंकि तुझ

से मैं अपने छुटकारे की आशा नहीं करता, क्योंकि यह मैं भली भांति जानता हूं कि तुझ जैसे दुरात्माओं के पास छल की कमी नहीं रहती, परन्तु यह अपवाद, कि मैंने किसीकी कोई वस्तु चुराई है, मैं नहीं सह सकता। चोरी करना सिक्ख जाति का धर्म नहीं है; इसलिये तू बतला कि तेरी लड़की की तख़्ती चुराने का झूठा अपवाद मुझे कौन लगाता है?"

यह सुनकर सरदार ने जोर से पुकारा—'अबदुल्!' जिसे सुनते ही वही बदज़ात, पाजी अबदुल् दरबार में आया और ज़मीन चूमता हुआ सरदार के सामने जाखड़ा हुआ। तब सरदार मेहरख़ां ने कुछ कड़ाई के साथ उससे कहा,—"इस कैदी ने हमीदा की याक़ूतीतख़्ती चुराई है, इस बारे में तू क्या जानता है, बयान कर।"

यह सुनकर कांपते हुए गले से अबदुल कहने लगा,—"मैंने इस कैदी के पास वह तख़्ती देखी है, इससे मैं समझता हूं कि इसने किसी ढब से उस तख़्ती को चुरा ली है। क्योंकि इस बात का तो कभी यकीन किया ही नहीं जासकता कि एक काफ़िर और अपने मुल्क के दुश्मन को दुख़्तर-ई-सर्दार अपनी तख़्ती मुहब्बत की निशानी के तौर पर देडालेगी।"

"मैंने ज़रूर अपनी बेशकीमत याक़ूतीतख़्ती इस बहादुर जवान को दीहै। जिस बहादुर नौजवान ने मेरी आबरू और जान बचाई, जिसने मुझे उस ख़ूंख़ार आफ़त से बचाकर मेरी हिफ़ाज़त के लिये सारी रात मेरे साथ रह कर निहायत तकलीफ़ उठाई, और जिसने मेरे लिये अपने तईं इस बला में फंसाया, अजनबी, ग़ैरमज़हब और ग़ैरक़ौम होने पर भी मैंने ख़ुशी से अपनी निशानी इस बहादुरजवान को देडाली। लिहाज़ा, इस आम दरबार में अफ़रीदी सरदार की लड़की इस बात को ख़ुशी से कबूल करती है कि इसने इस भलाई करनेवाले बहादुर जवान को उसकी नेकियों के एवज़ में निशानी के तौर पर अपनी तख़्ती का देडालना गैरमुनासिब नहीं समझा। पस, जो लोग इस नेक जवान को तख़्ती के चुराने का इल्ज़ाम लगाते हैं, वे सिर्फ़ झूठही नहीं बोलते, बलिक इन्सानियत के खिलाफ़ सर उठाते हैं।"

इस आवाज़ के सुनते ही सारे दरबार की नज़र उधर ही खिंच गई, जिधर से यह आवाज़ आई थी, और सभोंने आश्चर्य से देखा कि उपर्युक्त बात के कहनेवाली स्वयं हमीदा ही थी। यह देखतेही अफ़रीदी

बीरों की तल्वारें झनझनाहट के साथ म्यान से निकल पड़ीं, मेरे हृदय का भी रुधिर उष्ण होकर बड़ी तेज़ी के साथ नाड़ियों में दौड़ने लगा और रक्षकों ने मर्यादा से सिर झुकाकर हमीदा के लिये रास्ता छोड़ दिया। मैं पास ही खड़ाथा, सो मैंने बड़े आदर की दृष्टि से उस निर्भीकहृदया, महिमान्विता पठानकुमारी का स्वागत किया और उसके संकोचहीन भाव तथा अकुंठित गति को मैं देखने लगा।

गतरात्रि को जिस भेस में हमीदा मुझसे कारागार में मिली थी, इस समय भी वह उसी भेस में थी। किन्तु इस समय उसके नेत्रों में नारीजनोचित कोमलता तथा स्त्रीजनोचित करुण भाव न था, बरन उनके बदले में स्पष्ट घृणा, अटल प्रतिज्ञा, उद्धत दर्प और अम्लान तेजस्विता मेघान्तरित मध्यान्हमार्तण्ड की भांति उसके नेत्र और मुख से टपकी पड़ती थीं। अहा! उस समय न जाने किसी घोर अनिष्ट की आशंका से सारा दरबार विलोड़ित हो उठा था।

हमीदा धीरे धीरे अपने पिता के पास पहुंची और उसके पैर के पास दोजानू बैठ कर असंकुचित भावसे कहने लगी,—"प्यारे वालिद! मैंने अपनी ख़ुशी से इस अजनबी और परदेसी बहादुर को अपनी तख्ती नज़र दी है, इस बातसे मैं इन्कार नहीं कर सकती। अगर आज यह बहादुर मेरी तख्ती के चुराने के कसूर में गिरफ्तार न किया गया होता तो मैं इस भरे दरबार में कभी न आती और उस तख्ती के ज़िक्र करने की भी कोई ज़रूरत न समझती; इसलिये अगर मेरी इस हर्कत से मेरी या आपकी शान में कुछ फ़र्क आया हो तो उसके लिये आप मुझे मुआफ़ करेंगे। इसी बहादुर सिपाही ने मेरी आबरू और जान को दुश्मनों के हाथ से बचाया है। इसलिये दुनियां में ऐसी कौन चीज़ है, जो मैं बगैर तअम्मुल किए इसे नहीं देसकती! आह! ऐसी नेकी करने वाला यह बहादुर जवान चोर है, यह बात जो नालायक अफ़रीदी अपनी नापाक ज़बान से निकाल सकता है, उसे फ़ौरन अफ़रीदी सिवाने के बाहर कर देना चाहिए। मैं जानती हूं कि ऐसी झूठी, गंदी और बे बुनियाद बात का फैलाने वाला नालायक कौन है! वह बदज़ात अबदुल है और इसी कमीने ने ऐसी वाहियात बात फैलाकर इस बेकसूर बहादुर को नाहक फंसाया है। आप अपने प्यारे गुलाम अबदुल से पूछिए कि गोखों के भयानक छुरे से इस कंबख्त की जान किसने बचाई! अफ़सोस, कमीना अबदुल सिर्फ झूठा ही नहीं है, बल्कि वह

दगाबाज़ और एहसान-फ़रामोश भी है।

" प्यारे वालिद! इसी बहादुर नौजवान ने मेरी आबरू और जान के साथही साथ इस कमीने अबदुल् की भी जान उन कंबख्त गोरों के हाथ से बचाई, जिसके एवज़ में इसने अपनी खुदगरज़ी और कमीनेपन के बाइस इस बेगुनाह बहादुर को चोरी की इल्ज़त में गिरफ्तार करके सज़ा दिलवाने के लिये आपके रूबरू पेश किया है। मैं चाहती हूं कि अबदुल की शरारतों पर इन्साफ़ किया जाय और यह बहादुर जवान इज़्ज़त के साथ अफ़रीदी सिवाने के बाहर पहुंचा दिया जाय। अगर अफ़रीदियों के खिलाफ़ तल्वार उठाने का जुर्म इस बहादुर शख्स पर लगाया जाय तो उसका निबटारा जंग के मैदान में किया जा सकता है। इसलिये मैं चाहती हूं कि— — — —"

हमीदा और भी न जाने क्या क्या कहती, पर अफ़रीदी सरदार मेहरखां मारे क्रोध के बीचही में 'हुंकार' कर उठा और अपने तख्त पर खड़ा हो, बड़े कर्कश स्वर से कहने लगा,—

" बेवकूफ़ लड़की! तूने क्या अपने दिल में यही समझ रक्खा है कि अफ़रीदी सरदार मेहरखां एक पागल लड़की के कहने मुताबिक काम करेगा! बस, मैंने सब बातें समझ लीं, अब तू चुप रह; क्योंकि अब मैं तेरी कोई बात सुनना नहीं चाहता। हमारे मुल्क के दुश्मन और अंगरेज़ों के एक गुलाम काफ़िर को तूने अपनी बेशकीमत तख्ती अपनी मुहब्बत की निशानी में दी; इस भरे दरबार में आकर इस बात के ज़ाहिर करने में, अफ़सोस है कि शर्म तेरी दामनगीर न हुई और हया से हाथ धो कर तूने अपने साथही मेरी भी शान में फ़र्क डाला और तू अपने इस काफ़िर आशिक के बचाव के लिये मुझसे सिफ़ारिश करती है? आह! मैंने इस बात का ख्वाब भी नहीं देखा था कि अफ़रीदी कौम की—ज्यादःतर खासमेरी लड़की की शर्मनाक कार्रवाई होगी! सुन बेवकूफ़ हमीदा! तू हर्गिज़ ऐसा न समझ कि मैं तेरे इस काफ़िर आशिक को छोड़ दूंगा और यह बदज़ात यहांसे लौट कर मेरे मुल्क में अंगरेज़ी झंडा गाड़ने का मौका पाएगा। बस जो काफ़िर, अफ़रीदी सरदार की नासमझ लड़की के दिल को लुभाना जानता है, उसे कैसी सज़ा देनी चाहिए, इस पर मैं बख़ूबी गौर कर चुका हूं। लेकिन खैर, अगर यह तेरा आशिक कैदी एक एकरार करे तो इसकी जान बख्शी जासकती है। और वह बात यह है कि अगर यह काफ़िर

अपने बेअसूल मज़हब को छोड़ कर पाक दीन इस्लाम को कबूल करे। बस, अगर यह कैदी मुसलमान हो जाय, तो इसकी जान न ली जायगी, लेकिन जबतक यह जीता रहेगा, इसे बराबर अफ़रीदी जेलख़ाने में कैद रहना पड़ेगा।"

इतना कहकर मेहरख़ां ने मेरी ओर देखा और कर्कशस्वर से कहा,—"अय, काफ़िर नौजवान! मैं तुझे तीन दिन की मोहलत देता हूं; इन तीन दिनों में तू बख़ूबी इस बात पर गौर करले कि तू अपनी जान देना चाहता है, या मुसलमान होकर अफ़रीदी जेलख़ाने में रहना।"

इतना कहकर उसने अपने सिपाहियों की ओर देखकर, जो कि मुझे उस खोह से निकाल कर इस दरबार में लाए थे, कहा,—"सिपाहियों! इस काफ़िर कैदी को लेजाकर बदस्तूर उसी जेलख़ाने में बंद करदो।"

इतना कह और अपने तख़्त से उतरकर मेहरख़ां दरबार-गृह से बाहर चला गया। उस समय एकाएक मेरी दृष्टि अबदुल की ओर जा पड़ी तो मैंने क्या देखा कि वह नर राक्षस मेरी ओर देख देख कर पैशाचिक हास्य कर रहा है। हा! नारकीय पिशाच के उस वीभत्समय हास्य को देखकर मैंने घृणा, अवज्ञा और तिरस्कारपूर्वक उसकी ओर से अपनी आंखें हटा लीं और साथही मैंने हमीदा की ओर आंखें फेरीं, जो अब तक अपने पिशाच पिता के सिंहासन के पास सिर झुकाए हुए खड़ी थी और स्त्रीजनोचित अभिमान से जिसका चेहरा तुषारदग्ध कमल की भांति हो रहा था। जिस दिन मैंने गोर्खे सिपाहियों के हाथ से हमीदा की रक्षा की थी, उन दिन प्रदोष काल के हलके उंजालेमें मैंने उस अपमान-पीड़िता वीर्यवती अफ़रीदी कुमारी के नेत्रों में जैसी दिव्य ज्योति देखी थी, आज स्नेहमय पिता के पदप्रान्त में, प्रकाश्य दरबार में, स्वजातीय अमात्यमंडली और योद्धाओं के आगे इस प्रकार अपमानित और उपेक्षित होने पर उसके नेत्रों की वह ज्योति न जाने कहां जाकर विलीन हो गई थी और उन नेत्रों में अभिमान से उमंगे हुए आंसुओं की बाढ़ दिखलाई देने लगी थी। हाय, तब मैंने समझा कि पर्वत-बासिनी पठानी हमीदा निरी पाषाणी नहीं, बरन रक्तमांसशरीरा नारी ही है और बिधाता ने इस पार्वतीय कुसुम में भी अपनी निज सम्पत्ति अर्थात् कोमलता और सुगन्धि दी है।

छठवां परिच्छेद

मैं थोड़ी ही देर तक वहां था, इतनी ही देर में मैने यह सब देखा फिर पहरेवालों के साथ मैं उसी खोह में लौट आया और जानवरों की तरह उसमें बंद कर दिया गया ।

तीन दिन और तीन रात मुझे उसी भयानक कारागारही में बीते। हाय, ये तीन दिन बड़ेही कष्ट से बीते । कहां तो स्वाधीनता, शत्रुओं के खोजने का महाउत्साह, पर्वतस्थली में भ्रमण, पहाड़तोड़ तोपों की गंभीर ध्वनि, श्रेणीवद्ध सौ सौ बंदूकों की बारंबार आवाजें, तीखी तलवारों की झनझनाहट, और बीरताव्यंजक प्रतिक्षण नवीनातिनवीन उत्साह; और कहां इस अन्धकारपूर्ण, भयानक पहाड़ी बिल में पशुओं की भांति अकेले समय बिताना ! हा ! उस समय मैने मनही मन यह समझ लिया था कि भयानक मृत्यु जल्लाद बनकर मेरी परमायु के मस्तक पर कुठाराघात कर रही है । हा ! यह कौन जानता था कि मुझे अकालही में दुराचारी अफ़रीदियों के हाथ पशु की मौत मरना पडेगा, मेरी भरी जवानी इस प्रकार मिट्टी में मिल जायगी, और मेरे सारे मनोरथ बिना पूरे हुए ही रह जायंगे ! ऐसी मौत से मैं नहीं मरना चाहता था, पर उस समय मेरा चाराही क्या था ! यदि हाथ में तलवार हो और सामने लड़कर मरना पड़े तो उस मृत्यु को मैं बड़े सुख की मृत्यु समझता हूं; परन्तु उस मृत्यु को स्मरण कर मेरा हृदय रहरह कर कांप उठता था ।

ये तीन दिन मैने तीन युग के समान काटे, क्योंकि इन तीन दिनों में एक दिन भी सुन्दरी हमीदा के दर्शन मुझे नहीं हुए थे । वह क्यों न मुझसे मिली, इसका कारण मुझे पीछे विदित हुआ था कि निज पिता की कड़ाई के कारण वह मेरे पास नहीं आसकी थी, परन्तु इस बात पर मुझे पूरा विश्वास था कि इस भयानक शत्रुपुरी में सिवा उसके मेरी भलाई चाहनेवाला और कोई नहीं है । किन्तु एक निस्सहाया अफ़रीदी बाला हज़ारों बैरियों की तल्वार से मुझे क्यों कर बचा सकैगी, यह चिन्ता मुझे और भी पागल किए देती थी । किन्तु मेरे प्राण बचने का एक मात्र उपाय था,—धर्म त्याग; अर्थात अपने पवित्र सिक्ख धर्म को छोड़ कर मुसलमानों के कोलेपत

मुहम्मदी धर्म का ग्रहण ! किन्तु ऐसा मैं कदापि नहीं कर सकता ! अहा ! जिस समय गुरु तेगबहादुर ने मुसलमानी धर्म के ग्रहण करने की असम्मति प्रगट की थी और औरंगज़ेब के हुक्म से वे कत्ल किए गए थे। तो जब जल्लाद की तेज़ तल्वार उनके सिर पर उठी थी, उस समय उन्होंने यही कहा था कि,—" मैने सिर दिया, परन्तु धर्म न दिया ! " आहा ! उसी पूजनीय गुरु का शिष्य हो कर मैं प्राण के भय से धर्म त्याग करूंगा ! कदापि नहीं । हाय, वह जीवन किस काम का रहेगा, यदि मैं निज धर्म त्याग करके कापुरुष की भांति अपने बैरी से निज प्राण की भिक्षा मांगूंगा ! बस, ऐसे तुच्छ जीवन से मुझे कुछ भी प्रयोजन नहीं है, बरन ऐसे क्षणिक जीवन से मरना कहीं बढ़ कर है । जगदीशबाबू ! इस प्रकार मनही मन निश्चय कर के मरने के लिये मैं तैयार हुआ ।

चौथे दिन बड़े तड़के ही पहरेवाले ने मुझे दरबार में चलने के लिये तैयार होने को कहा ! मैं तो और भी पहले से तैयार था, सो चट उसके साथ हो लिया और अपने मामूली कामों से छुट्टी पा कर दरबार में पहुंचा । मैंने इस बात का सिद्धान्त कर लिया था कि आज का दरबार केवल मेरे प्राण लेने के लियेही किया गया है । आज के दरबार में सैकड़ों अफ़रीदी सरदार नंगी तल्वार लिये बैठे थे, सरदार मेहरखां भी बड़ी शान शौकत से अपने तख्त पर बैठा था और उसके पीछे चालीस सिपाही नंगी तल्वार लिये खड़े थे, दरबार के सामने मैदान में पांच सौ सवार नंगी तल्वार और भाले लिये कतार बांधे खड़े थे और मेरे पीछे सोलह बंदूकधारी जल्लाद खड़े हुए थे । एक बेर दृष्टि घुमा कर मैंने यह सब देख लिया और फिर परमात्मा का स्मरण कर, तन कर मेहरखां के सामने देखा । मुझे उस प्रकार निडर भाव से खड़े देख कर कदाचित वह मनही मन झल्ला उठा और झुंझला कर बोला,—

" क़ाफिर कैदी ! इन तीन दिनों के अंदर तूने मेरी बात पर बख़ूबी गौर कर लिया होगा ? "

मैंने कहा,—" हां, मैंने उस बात पर भली भांति बिचार कर लिया है । "

मेहरखां ने कहा,—" तो तू झूठे सिक्ख मज़हब को छोड़ कर दीन इस्लाम के कबूल करने के लिये राज़ी है ? "

यह सुनतेही मैंने मारे क्रोध के जलकर अपनी आंखों से आग

बरसाते हुए कहा,—" नहीं, कभी नहीं ! क्योंकि जिस तरह तू मेरे मज़हब को झूठा कह रहा है, उसी तरह मैं भी तो मेरे मज़हब को झूठा समझ रहा हूं ! फिर मैं उसे क्योंकर स्वीकार कर सकता हूं ?"

यह बात मैंने बड़े आवेश के साथ कही; क्योंकि जैसे बुझने के समय दीपक एकबार ' दप्प ' से जल उठता है, उसी प्रकार मृत्यु को सामने देखकर मेरा हृदय भी उल्लसित हो उठा और मैंने बड़ी दृढ़ता के साथ ऊपर कहा हुआ वाक्य कहा। मेरी बातें सुनकर मेहरखां ने कहा,—" सुन, बेवकूफ़ ! मैं तुझे यकीन दिलाता हूं कि अगर तू मुसलमान हो जायगा तो तुझे मैं अपने दरबारी अमीरों में शुमार कर लूंगा और अपनी दुख्तर हमीदा को भी तेरे हवाले करूंगा। इसके अलावे, अगर तू हिन्दुस्तान को जाया चाहेगा, तो अंग्रेज़ों से लड़ाई ख़तम होने के बाद तुझे ख़ुशी से अपने सिवाने के बाहर पहुंचा दूंगा।"

जगदीशबाबू ! यह लालच ऐसे भयंकर हलाहल से मिला हुआ था कि जिसकी कड़ुवाहट से मेरा सिर घूम गया और मैंने बड़े कड़े शब्दों में कहा,—" छिः ! तू क्या बावला हुआ है, जो मुझे लालच दिखला कर मेरे धर्म से मुझे डिगाना चाहता है ! अपने दरबारी अमीरों में शुमार करना या हमीदा को देडालना तो दूर रहा, अगर तू मुझे अपने सिंहासन के साथ बिहिश्त की सारी हूरों को भी मुझे देडाले, तब भी मैं अपना धर्म न छोड़ूंगा। और यदि कभी मुझे ऐसा अवसर मिला तो मैं तेरी लड़की हमीदा को अपने मज़हब में लाकर तब उससे शादी करूंगा, अन्यथा नहीं। तू क्या नहीं जानता कि अबतक हज़ारों मुसलमान दीन इस्लाम को छोड़ छोड़ कर पवित्र सिक्ख धर्म में दीक्षित हो चुके हैं और एक सिक्ख ने भी मुसलमानी मत को ग्रहण नहीं किया है। इसलिये तू मुझसे ऐसी आशा न रख।"

मेरी बात सुनकर मेहरखां मारे क्रोध के थर्रा उठा और ज़ोर से चिल्ला कर कहने लगा,—" बेवकूफ़ काफ़िर, अब तेरी मौत बिल्कुल तेरे नज़दीक पहुंच गई है। अफ़सोस, तू जानबूझकर अपनी जान देरहा है, वर न मैं यह नहीं चाहता था कि नाहक तेरी जान लूं।"

उसकी यह बात सुनकर मैं ज़ोर से हंसपड़ा और कहने लगा,—" मुझे यह बात पहिले नहीं मालूम थी कि तुझमें रहमदिली कूट कूट कर भरी हुई है। अस्तु, सर्दार मेहरखां ! तू इस बात की फ़िक्र न कर और मेरे लिये अपना दिली अफ़सोस ज़ाहिर मत कर। तू निश्चय जान

कि सिक्खवीर मौत से नहीं डरते।"

मेरी बात सुनकर मेहरखाँ और भी भभक उठा और ज़ोर से बोला,— "बेवकूफ़, काफ़िर! मैंने समझ लिया कि तेरी मौत तेरे सरपर आपहुंची है! तो खैर, ऐसाही हो! मैं तुझे कत्ल का हुक्म सुनाता हूं, इसलिये अब तू मरने के लिये तैयार होजा। आज शाम को अफ़रीदी जल्लाद तुझे कत्ल करेगा।"

बस, इतना कह कर उसने मुझे पुनः जेल में लेजाने के लिये अपने सिपाहियों को हुक्म दिया और मैं फिर उसी भीषण कारागार में पहुंचा दिया गया।

जगदीश बाबू! जबकि मैंने अपनी मौत को आपही बुलाया था तो फिर मैं मरने से भयभीत क्यों होने लगा था! अस्तु, कारागार में आनेके समय मैंने भगवान भास्कर को भक्तिपूर्वक प्रणाम किया, क्योंकि फिर मुझे दूसरे दिन के सूर्य का दर्शन कब संभव था! यद्यपि इस नश्वर संसार में जो जन्मा है, वह एक न एक दिन अवश्य मरेगा, यह बात सभी जानते हैं; परन्तु 'तुम आज मरोगे,' ऐसा सुनकर कौन धीरज धर सकता है! हाय, इस महा त्रासदायक मृत्यु के समाचार को सुन कर कौन विकंपित नहीं होता! परन्तु तुम सच जानो कि, जबकि मैं स्वयं जान देने के लिये तैयार हुआ था तो फिर मुझे उस (मृत्यु) से भय क्यों लगने लगा था! अतएव मैं स्वस्थ होकर कारागार में परमेश्वर का चिन्तन करने लगा। किन्तु उस ईश्वर के भजन में रह रह कर व्याघात होने लगा और प्यारी हमीदा का ध्यान मुझे विचलित करने लगा। यद्यपि फिर हमीदा मुझसे नहीं मिली थी, यह बात मैं कह आया हूं, परन्तु वह उसी प्रहरी के हाथ मेरे लिये बराबर भोजन भेज दिया करती थी, जिसे मैं बड़ी रुचि के साथ खाता था, परन्तु आज के भोजन को मैंने छूआ तक नहीं, और यही इच्छा मनही मन करने लगा कि किसी प्रकार मरने से पहिले एक बेर हमीदा का दर्शन होजाय! परन्तु यह मेरी इच्छा मेरे मनमें ही रही और इस बिषय में मैंने उस पहरेदार से इसलिये कुछ कहना उचित न समझा कि कहीं मेरे कारण उस बेचारी पर कोई आपदा न आजावे, क्योंकि इस बात को मैं भली भांति समझता था कि यदि वह मेरे पास तक आसकेगी, तो मरने से पहिले वह मुझे अवश्य अपना ही दर्शन देगी।

निदान, इन्हीं सब जंजालों में फंसकर मैं शान्तिपूर्वक ईश्वराराधन

भी नहीं करने पाया था कि भगवान भास्कर अस्ताचल पर पहुंच गए और साथही तीन अफ़रीदी सिपाही आकर मुझे उस जगह पर ले गए, जहांपर मुझ जैसे अभागों की जानें ली जाती थीं।

वह जगह बस्ती से कुछ दूर, पहाड़ की चोटी पर थी और वह इतनी सूनसान और मनहूस थी कि वहां पहुंचने पर एक बेर मेरा हृदय कांप उठा। परन्तु तुरंत ही मैंने गुरु गोविन्दसिंह का नाम लेकर अपने हृदय को दृढ़ किया और घातकों से कहा कि,—'वे अपना काम करें।"

उस समय अस्त होते हुए सूर्य की लाल प्रभा से उस पर्वतस्थली की कैसी प्राकृतिक शोभा थी, इसके अनुभव करने का मुझे अवसर न था, क्योंकि मेरी मृत्यु मेरे बहुत ही समीप पहुंच गई थी। अस्तु, मैंने एक बार घूमकर चारो ओर इसलिये दृष्टि फेरी कि यदि कदाचित हमीदा कहीं पर खड़ी हो तो उसे एक बार देखलूं, परन्तु हा! उस समय वह थी कहां!

निदान, फिर तो जल्लादों ने मेरे हाथ पैर और आंखों के बांधने की इच्छा प्रगट की, जिसे सुनकर मैंने कहा,—"आह! मरने के पूर्व तो अब तुम लोग मुझे बंधन में न डालो और मरते मरते मुझे इन आंखों से इस प्राकृतिक शोभा को देख लेने दो। फिर मरने के बाद न जाने मैं किस लोक में जाऊंगा और वहां पर न जाने किस प्रकार के सुख वा दुःख को पाऊंगा।"

मरने के समय की मेरी इस बात को जल्लादों ने मान लिया और मैं मरने के लिये तैयार हो गया। उस समय एकाएक मेरी दृष्टि सामनेवाली एक पहाड़ी चोटी पर जो गई तो मैंने देखा कि सफ़ेद साड़ी पहने हुए कोई स्वर्गीया सुन्दरी अचल-प्रतिमा की भांति खड़ी है! यद्यपि सूर्यास्त हो जाने के कारण मैं यह स्पष्ट न जान सका कि वह हमीदा ही थी; या कोई और थी, पर मेरे चित्त ने मुझ से बार बार यही कहाकि यह हमीदा ही है। आह! यह जानते ही मैं मारे प्रसन्नता के अपनी मृत्यु को क्षण भर के लिये भूल गया, परन्तु तुरंत ही जल्लादों के संकेत करने से मैं सावधान हो गया, पर मेरी दृष्टि उस अचल-प्रतिमा (हमीदा) ही की ओर लगी रही।

अहा, प्रेम! तू धन्य है! सामने मृत्यु, सिरपर घातक, बगल में काल और चारो ओर से निराशा की फांसी, तिसपर भी प्रेम! अतएव

कहते हैं कि प्रेम तू धन्य है ! क्षणमात्रही का जीवन अब रहगया है, दीपक बुझने में अब कोई सन्देह नहीं है, आशा एक दम से शून्य में मिल गई है और दुराशा ने भी एक प्रकार से साथ छोड़ दिया है, तथापि प्रेम ! तथापि प्रेमका यह महामोहप्रद उत्पात ! ! !

मेरीदृष्टि उसी अस्पष्टमूर्त्ति की ओर, जिसेमैंने हमीदा समझ रक्खा था, लगगई थी और उसकी ओर निहारते निहारते मुझे आशा और निराशा ने बेतरह झकझोर डाला था। यद्यपि मैं अपने जीवन से सब तरह निराश होहीचुका था, किन्तु उस अस्पष्ट-हमीदा-मूर्त्ति के देखते ही मुझे न जाने, आशा कैसी कैसी आशा देने लगी और न जाने मेरे मनमें कैसी कैसी तरंगें उठने लगीं। उस समय, मुझे यही जान पड़ने लगा कि मानो मैं किसी कल्पनातीत दिव्य राज्य में हमीदा के साथ बिचरण कर रहा हूं, और मुझे चारो ओर से अनेक दिव्यमूर्त्तियों ने घेर रक्खा है।

जगदीशबाबू ! उन जल्लादों में तीसरा व्यक्ति वही कमीना अबदुल था, जो मेरे उपकार का प्रत्युपकार करने आया था। सो उसने मुझे अन्तिम बार सावधान होने के लिये कहा, जिसके उत्तर में मैंने गरज कर कहा कि,—' तू अपना काम कर, मैं सावधान हूं।

निदान, ' गुड़ गुड़ गुड़म् ' करके तीनों बंदूकें छूट गईं और कंधे में चोट खा, मुर्छित हो कर मैं वहीं गिर गया। फिर मुझे चारों ओर अंधकारही अंधकार दिखलाई देने लगा और यह नहीं जान पड़ा कि फिर क्या हुआ !

सातवां परिच्छेद
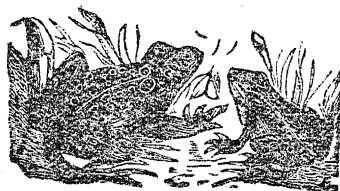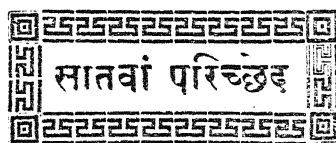
जब मैं होश में आया, उस समय रात थी, पर कितनी थी, यह मैं न जान सका। मैंने देखा कि घर के कोने में दीवट पर रक्खा हुआ एक दीया बल रहा है और मैं एक व्याघ्रचर्म पर पड़ा हुआ हूं। मेरे कंधे में, जहां पर कि मैंने चोट खाई थी, इतनी पीड़ा होरही है कि जिसके कारण करवट बदलना तो दूर रहा, मैं हिलडोल भी नहीं सकता हूं। मेरे सिरहाने सिर झुकाए हुए एक सुन्दरी बैठी है और बड़ी उत्कंठा से वह मेरे चेहरे को देख रही है! किन्तु वह कौन सुन्दरी थी, यह बात हलके उंजाले के कारण मैं एकाएक न जान सका।

एक तो मिटमिट करते हुए दीए का उंजाला कम था, दूसरे मेरी आंखों में पहिले की सी ज्योति नहीं बच रही थी, इसलिये प्रथम दर्शन में मैंने उस सुन्दरी को नहीं पहिचाना कि यह कौन है! अस्तु, कुछ देर में मैंने अपनी विलुप्त स्मृति को धीरे धीरे अपने हृदय में लाकर उस सुन्दरी से दो प्रश्ण किए,—"मैं कहां हूं—और तुम कौन हो?"

मेरे प्रश्ण को सुन और मेरे कान के पास अपना मुहं लाकर उस सुन्दरी ने बहुतही धीरे से कहा,—"आप घबरायं नहीं, क्योंकि आप अपने एक सच्चे दोस्त की हिफ़ाज़त में हैं।"

मैंने फिर कहा,—"तो तुम कौन हो!"

इस पर उस सुन्दरी ने कहा,—"मैं आपकी लौंडी हमीदा हूं। बस, अब चुपचाप पड़े रहिए, बोलिए मत; क्योंकि ज़ियादह बोलने में तकलीफ़ घटने के बनिस्वत और भी बढ़ जायगी।"

हमीदा का नाम सुनतेही मेरा मन फड़क उठा और मैं अपने छिन्न-भिन्न स्मृतिसूत्र के जोड़ने में उसी प्रकार यत्न करने लगा, जैसे मकड़ी अपने जाले के तार टूटने पर उसके जोड़ने में प्रयत्न करने लगती है। सो कुछ देर में चित्त को संयत करके मैंने पहिले के सारे वृत्तान्त को धीरे धीरे समझा और हमीदा से कहा,—"हमीदा! तुम स्वर्गीया देवी हो, मनुष्यलोक की नारी नहीं हो। अतएव मैं समझाता हूं कि मुझ जैसे पापी के उद्धार करने के लियेही तुम स्वर्ग से उतर कर इस नरक में आई हो!"

मेरी बात सुनकर हमीदा की आंखे फिर लाल होगई, पर उसने अपने उमड़ते हुए क्रोध के वेग को रोक कर कहा,—"यह पहाड़ी मुल्क मेरी पैदाइश की जगह है, चुनांचे यह मेरा बिहिश्त है। बस, इसे आप दोज़ख न कहें। मैं इस पहाड़ी मुल्क के सर्दार मेहरखां की एक नाचीज़ दुख्तर हूं, इसलिये यह मैं नहीं कह सकती कि आप गुनहगार हैं; क्योंकि इस बात का जानने वाला सिर्फ वही पर्वरदिगार है। बस, मैं गुनहगार को नज़ात देने नहीं, बल्कि आपकी नेकियों का बदला चुकाने आई हूं और अबतक भी अपने फ़र्ज़ को अदा नहीं कर सकी हूं। क्योंकि यह तो तभी हो सकेगा, जबकि मैं आपको ख़ुशी ख़ुशी अफ़रीदी सिवाने के बाहर कर सकूंगी!"

हमीदा की बातें सुनकर मैंने कहा,—"प्यारी, हमीदा! मैं तो जल्लादों की गोलियां खाकर मर गया था, फिर मैं क्योंकर जी गया?"

यह सुनकर हमीदा मुस्कुराने लगी और उसने मेरी ओर प्रेमपूर्वक देखकर कहा,—"आप मरे न थे, क्योंकि मरने पर क्या कभी कोई जी सकता है! आप सिर्फ़ बेहोश होगए थे; पर इस जगह आप क्योंकर आए, यह बात फिर कभी मैं आपसे कहूंगी, क्योंकि इस वक्त आप इतने काहिल होरहे हैं कि ज्याद: बात चीत करने से आपको फिर बेहोशी दबा लेगी।"

मैंने घबरा कर कहा,—"अच्छा, तो मुझे यहां आए कै दिन हुए?"

हमीदा ने कहा,—"आज पूरे पांच दिन।"

मैंने कहा,—"पांच दिन! अस्तु, तो अभी मुझे कबतक यहां इस तरह पड़ा रहना पड़ेगा?"

हमीदा ने कहा,—"जबतक आप बख़ूबी भलेचंगे न होजांयगे। क्योंकि यह सारा अफ़रीदी ज़ज़ीरा आपका दुश्मन हो रहा है, इसलिए जबतक आपके जिस्म में बख़ूबी ताकत न आ ले, मैं हर्गिज़ आपको यहां से जाने न दूंगी।"

मैंने कहा,—"तो क्या यह जगह तुम्हारे महल के अन्दर है?"

हमीदा,—"नहीं, लेकिन इसका मिलान मेरे महल से ज़रूर है। मगर ख़ैर, आप घबरायं नहीं, क्योंकि अब आप ऐसे मुकाम पर हैं कि जहांपर सिवाय मेरे और मेरी बहिन के, और कोई तीसरा शख़्स आही नहीं सकता।"

इसके बाद मैं फिर कुछ न बोला, क्योंकि इतनी ही बातचीत

करने से मुझे सुस्ती ने आघेरा, जिसे जान कर हमीदा ने मुझे कोई दवा पिलाई, जिसके पीतेही मैं गहरी नींद में सो गया। यद्यपि मैं गहरी नींद में सो गया, पर तौभी मुझे यह जान पड़ने लगा कि मानो किसी सुन्दरी ने मेरे सिर को अपनी अत्यन्त कोमल गोद में रख लिया है और अपने अत्यन्त कोमल हाथ को मेरे बदन पर फेरना प्रारंभ किया है! जब तक मैं सोया रहा, ऐसाही सपना बराबर देखता रहा, बरन मुझे तो ऐसा भी जान पड़ता था कि मानो कोई प्रेममयी सुन्दरी मेरे लिये आंसू बहाती थी, जिसकी कई बूंदें मेरे बदन पर भी गिर पड़ी थीं। कितनी देर में मैं जागा, यह मैं नहीं कह सकता, पर जब मैं जागा तो वहां पर मैने किसी कोभी न पाया, पर कई बूंदें जिन्हें मैने सपने में गिरते देखा था, अबतक मेरे बदन पर मौजूद थीं, और सूखी न थीं। मैने देखाकि उस पाषाणमय गृह में, जिसमें मैं पड़ा था, किसी ओर कोई द्वार न था, पर ऊपर बने हुए छेदों में से उंजाला आ रहा था, इस लिये मैने जाना कि दिन का समय है।

इतने ही में मैने क्या देखा कि एकाएक हलकी आवाज़ के साथ एक ओर की दीवार का एक पत्थर ज़मीन के अन्दर घुस गया और उस राह से हाथ में खाने का सामान लिए हुए हमीदा आपहुंची। उसे देख-तेही मैं उठने लगा, पर मुझसे उठा न गया। मुझे उठने की चेष्टा करते हुए देख कर हमीदा ने कहा,-"आप उठने की कोशिश न करें, तकलीफ़ होगी।"

मैने कहा,—" हमीदा! तुमने तो मुझे एक बिचित्र गृह में रक्खा है!"

उस सुन्दरी ने कहा,—" जी! मैं हमीदा नहीं हूं; बल्कि उसकी बहिन 'कुसीदा' हूं!"

यह बिचित्र उत्तर सुन कर मेरे आश्चर्य की कोई सीमा न रही! क्योंकि कुसीदा बिल्कुल हमीदा सी ही थी और उन दोनों की सूरत शकल में कुछ भी अन्तर न था। यह बात मुझसे हमीदा कह चुकी कि,—'इस जगह पर मैं और मेरी बहिन के सिवाय और कोई नहीं आसकता;' और इसके पहिले भी हमीदा ने एक बार अपनी एक बहिन का होना बतलाया था। इसलिये उस सुन्दरी के कहने को मैने झूठ न समझा, परन्तु मुझे इस बात का बड़ा अचरज था कि क्या एक साथ पैदा होनेवाले—लड़की या लड़के—बिल्कुल एकही से होते हैं, और उनकी सूरत शकल में कुछ भी अन्तर नहीं होता?

आठवां परिच्छेद

मैं ये बातें मनही मन सोचता जाता था और कुसीदा की ओर टकटकी बांध कर देखता जाता था। मेरे मन के भाव को कुसीदा ने भली भांति समझा और हंस कर कहा,—" क्या, आपको मेरे कहने पर यकीन नहीं होता ! "

मैंने कहा,—" हां, सचमुच बात ऐसीही है और मैं ऐसा समझता हूं कि, हमीदा ! तुम मुझसे दिल्लगी कर रही हो ! "

इस पर वह खिलखिला कर हंस पड़ी और अपना बायां गाल मेरे सामने कर के बोली,—" देखिए, मेरे बाएं गाल पर तिल का निशान है। बस, अब तो आपने यह बात बख़ूबी समझली होगी कि मैं हमीदा नहीं हूं, बल्कि उसकी बहिन कुसीदा हूं और आपके साथ दिल्लगी नहीं की जा रही है ! "

मैंने कहा,—" वाह ! तिल तो हमीदा के गाल पर भी है ! "

उसने कहा,—" हां, बेशक है, लेकिन उसके दहने गाल पर है और मेरे बाएं गाल पर। बस, अगर ख़ुदा ने इतना भी फ़र्क हम दोनों में न डाल दिया होता तो फिर दुनियां में ऐसा कोई ज़रिया बाकी न रह जाता, जिससे हम दोनों अलग अलग पहचानी जा सकतीं। "

मैंने हमीदा के गाल पर वैसाही तिल ज़रूर देखा था, पर इस बात पर मैंने अब तक ध्यान नहीं दिया था कि उसके किस गाल पर तिल है ! सो, मैं कुसीदा की विचित्र बातों की उलझन को सुलझा रहा था कि इतने ही में हमीदा भी आ पहुंची और उसने एक कहकहा लगा कर मुझसे कहा,—" आज तो आप एक अजीब उलझन में फंसे होंगे ! क्योंकि आज यह पहला ही मौका ऐसा हुआ है, जबकि आपके सामने हम दोनो बहिनें आ मौजूद हुई हैं ! "

मैंने कहा,—" हां, निस्सन्देह ! आज मैं बड़ी उलझन में फंसा हुआ हूं। "

इसके अनन्तर कुसीदा ने वे सब बातें, जोकि उसके साथ मेरी हुई थीं, कह सुनाईं, जिन्हें सुन, हमीदा ने हंसकर कहा,—" हां, ये सब बातें, मैं बाहर ही से रौशनदान के पास खड़ी खड़ी सुन चुकीहूं। "

इसके अनन्तर कुसीदा चली गई और उसके जाने पर वह प्रवेश-द्वार बंद होगया फिर हमीदा ने मुझे बलकारक भोजन कराया और इधर उधर की बहुतसी बातें करने के बाद उसने कहा,—" प्यारे, निहालसिंह ! मुझे इस बात का बड़ा अफ़सोस है कि मैं दिन के वक्त आपके पास ज्यादे देर तक नहीं रह सकती. । हां, रातभर मैं आज़ादी के साथ रह सकती हूं, । क्योंकि अंगरेज़ों से गहरी लड़ाई छिड़ जाने के सबब मेरे वालिद और अबदुल् रातभर अफ़रीदी फ़ौज के मोर्चे पर रहते हैं. इसलिये आपके पास रहने का मुझे अच्छा मौका मिलता है। इसलिये मैं उम्मीद करती हूं कि आप मुझे ख़ुशी से इजाज़त देंगे और मैं इस वक्त आप से रुखसत होकर फिर रात को आजाऊंगी और रातभर आपकी ख़िदमत करूंगी ! "

उस करुणामयी, प्रेममयी और दयामयी अफ़रीदी युवती की सरल बातें सुनकर मेरी आंखों में प्रेम के आंसू उमग आए और मैंने उसका हाथ अपने हाथ में लेकर कहा,—" हमीदा ! तुम मुझे इतना चाहती हो ! "

यह सुन और अपना हाथ खैंच कर वह उठ खड़ी हुई और बोली,—" इस बात का जवाब तो आप अपने दिलही से पा सकते हैं।"

इसके अनन्तर उसने एक किताब निकाल कर मुझे दी और कहा,—" तनहाई की हालत में यह किताब आपको बख़ूबी ख़ुश करेगी और मैं वालिद के चले जाने पर रात को फिर आपके पास आजाऊंगी। "

इतना कहकर हमीदा उठी और किसी हिकमत से उस पत्थर को हटा कर उस कोठरी से बाहर होगई और बाहर जाकर उसने उस पत्थर को फिर ज्यों का त्यों बराबर कर दिया।

वह पुस्तक फ़ारसी भाषा के सुप्रसिद्ध नीतिविशारद कवि ' सादी ' की ' गुलिस्तां ' थी, जिसका मैं बड़ा भारी रसिक था, इस लिये उस पुस्तक को बड़े प्रेम से मैं देखने लगा। लगभग दो घंटे तक उस पुस्तक को मैं देखता रहा, इतने में कुसीदा आई और मुझे एक ग्लास शर्बत पिला कर चली गई। कदाचित वह कोई औषधि थी, जिसके पीने के थोड़ीही देर बाद मुझे नींद आने लगी और मैं गहरी नींद में सोगया।

जब मैं जागा, रात होगई थी, उसी कोने में दीया बल रहा था और हमीदा मेरे सिर में कोई तेल लगा रही थी। मैंने आंखें मलकर यह सब

देखा और आनन्दसागर में डुबकियां लेकर कहा,—" हमीदा, वह दिन अब बहुत समीप है, जबकि तुम मुझे अपने पास से दूर करोगी !"

हमीदा ने हंसकर कहा,—" अगर आपका दिल चाहे तो आप हमेशा मेरे पास रहिए।"

मैंने कहा,—" और यदि तुम्हीं मेरे साथ चलकर मेरे गले का हार बनो तो कैसा ?"

हमीदा,—" यह गैरमुमकिन है ! मैं अपने मुल्क को छोड़कर कहीं नहीं जा सकती, लेकिन इससे यह न समझिएगा कि हमीदा आपको भूल जायगी या हमीदा के जिस हाथ को आपने पकड़ा है, उसे हमीदा जीतेजी किसी गैर शख़्स के हाथ में देगी।"

मैंने अचरज से पूछा,—" तो क्या तुम शादी न करोगी ?"

उसने कहा,—" मेरी शादी तो होचुकी, अब क्या बार बार होगी ?"

मैंने जान बूझकर भी अनजान बनकर कहा,—" तुम्हारी शादी किसके साथ हुई है ?"

उसने कहा,—" जब कि इस बात की आपको ख़बर ही नहीं है तो फिर इसे सुनकर क्या कीजिएगा ?"

निदान, देर तक इसी प्रकार की बातें होती रहीं और हमीदा बराबर मेरे सिर और सारे शरीर में तेल मालिश करती रही। मैंने उसे बहुत मना किया, पर वह न मानी और अपनी मनमानी करती ही गई। फिर कुसीदा खाना ले कर आई और रकाबी रखकर चली गई। उसके जानेपर हमदोनो ने साथ बैठ कर भोजन किया और वह पहलाही अवसर था कि मैं उठकर बैठा था और हमीदा के साथ मैंने खाना खाया था।

अस्तु, इसी प्रकार दो सप्ताह में जब मैं कुछ सबल होगया तो एक रोज़ रात के वक्त हमीदा ने कहा,—" प्यारे निहालसिंह ! अगर आप चाहें तो मैं आज आपको अफ़रीदी सिवाने के बाहर कर सकती हूं। क्या, आप अब अपने तईं इस काबिल समझते हैं कि पहाड़ी रास्ते का सफ़र आसानी से कर सकेंगे ?"
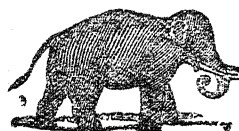
नवां परिच्छेद

यह सुनकर मैंने मनही मन सोचा कि अब व्यर्थ इस नरक-समान भयानक शत्रुपुरी में रहने से क्या लाभ है ! अतएव मैंने कहा,—"प्यारी, हमीदा ! यद्यपि तुम्हें छोड़कर मेरा यहांसे जाने का जी नहीं चाहता, परन्तु जब तक मैं यहांसे न जाऊंगा, तब तक तुम्हारे सिर से एक भारी बला न टलेगी, इसलिये अगर तुम मुनासिब समझो तो मुझे अफ़रीदी सिवाने से बाहर निकाल दो, क्योंकि मैं अब भली भांति पहाड़ी रास्ते को तय कर सकूंगा।"

हमीदा ने कहा,—"अच्छी बात है, मैं आज ही आपको यहांसे निकाल दूंगी; क्योंकि जब तक मैं आपको अफ़रीदी सिवाने से बाहर न कर लूंगी, मेरे दिल की धड़कन दूर न होगी।"

इसी समय कुसीदा कई हथियार और एक सुराही शर्बत लिये हुए आ पहुंची और उसने आकर सुराही और हथियार हमीदा के आगे धर दिए। हमीदा ने एक तलवार, एक बढ़ियां बंदूक और एक उत्तम बरछा मुझे दिया और एक एक आप लिया और उस सुराही में से दो तीन प्याले शर्बत मुझे पिला कर और आप भी पी कर उसने कुसीदा से कहा,—"प्यारी, बहिन ! जो कुछ मैंने तुम्हें समझाया है, उस पर बख़ूबी ध्यान रखना और ख़ूब होशियारी से रहना।"

इतना कह कर और उठ कर उसने एक मशाल जलाई और मुझे अपने साथ आने का इशारा कर के वह आगे हुई। वह आगे उसी रास्ते से बाहर हुई और मैं उसके पीछे। कुसीदा सबके पीछे थी। सो, उस घर के बाहर होते ही कुसीदा ने किसी ढंग से, जिसे मैं नहीं जान सका, वहांका पत्थर बराबर कर दिया। तब हमीदा ने एक ओर को उंगली उठा कर कहा,—"इस रास्ते से कुसीदा जायगी, क्योंकि यही रास्ता मेरे महल को गया है।"

इसके अनन्तर अपनी बहिन से और मुझसे सलाम बंदगी करके कुसीदा वहांसे चली गई और मैं हमीदा के साथ आगे बढ़ा।

हमीदा कहने लगी,—"यह एक सुरंग है, जिसमें कोस भर तक चलने के बाद हम लोग एक घने जंगल में निकलेंगे और वहांसे

आम रास्ते को छोड़ कर छिपी हुई पगडंडियों के रास्ते से चलेंगे।"

वह सुरंग बहुत ही तंग थी, इसलिये एक आदमी से ज्यादे एक साथ बराबर नहीं चल सकता था, किन्तु उसकी उंचाई इतनी अवश्य थी कि कैसा ही लंबा आदमी क्यों न हो, बराबर तन कर चल सकेगा।

निदान, कुछ देर में सुरंग को तय कर के हम लोग उससे बाहर हुए और हमीदा उसके द्वार को बंद कर और मशाल बुझा कर मेरे साथ हुई। आज कितने दिनों पीछे मैंने खुले मैदान की हवा खाई और आस्मान की सूरत देखी। उस समय मुझे कितना आनन्द हुआ था, इसका बखान मैं किसी तरह भी नहीं कर सकता।

अब जिस मार्ग से हम लोग चलने लगे थे, वह बहुत ही सकरा, बीहड़ ऊबड़ खाबड़, घने जंगलों से छिपा हुआ और बिल्कुल अन्धकार में डूबा हुआ था, किन्तु तौ भी हमीदा बड़ी आसानी से मुझे राह दिखलाती हुई आगे आगे चलरही थी और बड़ी कठिनता से मैं उसके पीछे पीछे चल रहा था।

चलते चलते हमीदा खड़ी हो गई और बोली,—"आज कल अंगरेज़ों से लड़ाई लगी रहने के सबब सब घाटियों और नाकों पर अफ़रीदियों का कड़ा पहरा रहता है, पर जिस छिपी राह से मैं तुम्हें 'लुंडीकोतल, की ओर लिए जा रही हूं, वह इतनी पोशीदा है कि दुश्मनों को इसका पता हर्गिज़ नहीं लग सकता, इसलिये इधर पहरे चौकी का उतना कड़ा बंदोबस्त नहीं है। लेकिन शायद, अगर किसी पहरेवाले से मुठभेड़ होजायगी तो ज़रूर हथियार से काम लेना पड़ेगा; इसलिये आप अपनी बंदूक भर लें।"

इतना कह कर हमीदा अपनी बंदूक में गोली भरने लगी, मैंने भी अपनी दुनली बंदूक भर डाली। फिर हम दोनो चलने लगे। इसी प्रकार बहुत दूर जाने पर हम लोग एक और भी बहुत ही स-करी घाटी में पहुंचे, जिसके दोनो ओर आकाश से बातें करने वाले बहुत ऊंचे पहाड़ खड़े थे। उस घाटी में कुछ दूर चलने पर मैंने कुछ उंजेला देखा और दबे पावं कुछ दूर और जाने पर अफ़रीदी सरदार मेहरख़ां की सतर्कता का अच्छा नमूना पाया। मैंने क्या देखा कि एक अफ़रीदी सिपाही हाथ में मशाल लिये हुए उस घाटी की रक्षा कर रहा है। उसके एक हाथ में मशाल और दूसरे में नंगी तलवार है और वह घूम घूम कर घाटी की रक्षा कर रहा है।

यह देख कर मैं रुक गया और मुझे रुकते देख हमीदा भी रुक गई और बोली,—" क्यों, आप ठहर क्यों गए ? "

मैंने कहा,—" क्या तुम नहीं देखतीं कि सामने पहरेवाला टहल रहा है । "

हमीदा,—" फिर इससे क्या ? "

मैं,—" अब क्यों कर इस घाटी के पार जा सकते हैं ? "

हमीदा,—" आप क्या पागल हुए हैं ? इतनी दूर आकर क्या अब आगे पैर नहीं बढ़ता ? "

मैं,—" पहरेवाले का क्या बंदोबस्त किया जाय ? "

हमीदा,—" क्या आपने कोई राय ठहराई है ? "

मैं,—" क्या कोई दूसरा रास्ता नहीं है ? "

हमीदा,—" है क्यों नहीं, लेकिन ऐसे सुभीते का और कोई दूसरा रास्ता नहीं है । और रास्तों में हज़ारों पहरेदार मुस्तैदी के साथ पहरा देते होंगे । "

मैं,—" तब यहांसे लौट कर मैं कहां जाऊं ? "

यह सुन कर हमीदा झल्ला उठी और कड़क कर बोली,—" जहन्नुम में जाओ ! छिः ! जो बहादुर होकर एक पहरेदार को देख कर इतना डरता है, उसके लिये जहन्नुम से बिहतर और कोई जगह नहीं है । अब तक मैं जानती थी कि मैं एक बहादुर शख्स के साथ आ रही हूं ! अगर यह जानती होती कि मेरा साथी निरा बोदा और भगेड़ू है तो मैं ख़ुद अब तक इस राह के साफ़ करने का बंदोबस्त कर डालती । अगर तुमको इस कदर पस्तहिम्मती ने दबा लिया है तो फिर तुम्हारा बंदूक रखना बिल्कुल बेफ़ाइदे है । मैं समझती हूं कि मुझे अब तुम्हारे खातिर अपनी बंदूक से काम लेना पड़ेगा । बस, बंदूक तुम ज़मीन में रख दो, क्योंकि इसके उठाने लायक अब तुम नहीं रहे । "

ओह ! यह कैसा तीव्र तिरस्कार था ! मैं अब बंदूक के धारण करने योग्य न समझा गया ! मेरे पुरुषों ने बंदूक धारण किए किएही कितने वैरियों के प्राण लेकर रणक्षेत्र में अपने प्राण त्याग दिए, मैं अपने प्राण को तुच्छ समझ शौक से अपने राजा की सहायता के लिये इस समर में आया, अपने प्राण की ममता दमनपूर्वक सिक्ख-जाति का गौरव रक्खा और धर्मरक्षा के लिये जल्लादों के आगे भी

अपनी दृढ़ता न खोई; इतने पर भी हमीदा मुझे बंदूक धारण करने के अयोग्य समझती है! उसकी इस कटूक्ति से मेरे सारे बदन में आग सी लग गई। यदि और किसीने मुझे कापुरुष कहकर मेरा ऐसा उपहास किया होता तो मैं तुरंत उसे इस ढिठाई का बदला देने से कदापि न चूकता, परन्तु हमीदा के हाथों तो मैं बिना दामों ही बिक चुका था, इसलिये मैंने अपने उमड़ते हुए क्रोध को मनही मन दबाकर धीरे धीरे कहा,—

"प्यारी हमीदा! मैं बंदूक उठाने के योग्य हूं, या नहीं, खेद है कि इसका प्रत्यक्ष अभिनय मैं तुम्हें दिखला न सका, इसलिये अब मैं इस विषय में क्या अभिमान करूं किन्तु कदाचित इस बात को तुम कभी अस्वीकार न करोगी कि मैं मौत से तनिक भी नहीं डरता। तौभी तुम 'डरपोक' कह कर मेरा ठट्ठा उड़ा सकती हो, और यह बात सच भी है; क्योंकि यदि मैं कापुरुष न होता तो इस आधी रात के समय, ऐसे बीहड़ मार्ग से तुम्हारी सहायता लेकर भागता क्यों! अतएव मेरा आज का यह काम, अवश्य ही कापुरुष का काम है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं। तुम निश्चय जानो, हमीदा! मैं अपने प्राण का कुछ भी भय नहीं करता, क्योंकि एक बेर तो मैं एक प्रकार से मरही चुका था; न हो, अब भी मरूंगा; किन्तु इस मार्ग में यदि इस समय कोई उपद्रव उठ खड़ा हो तो मैं तुम्हारी रक्षा क्योंकर कर सकूंगा! बस मुझे केवल इसी बात का सोच है। ऐसी अवस्था में तुम मुझे हज़ार बार कापुरुष कह सकती हो! तुम भूली न होगी, हमीदा! कि 'लुंडीकोतल' के मार्ग में गोर्खाओं के हाथ से जो मैंने तुम्हारे सन्मान की रक्षा की थी, उसके बदले में तुमने भरे दर्बार में अपने पिता से कैसी फटकार सुनी थी, अब यदि फिर यहां पर भी कोई वैसाही बखेड़ा उठ खड़ा हो, और तुम्हें अपनेही राज्य की सीमा के भीतर, अपने पिता के ही भृत्य से कुछ भी अपमान सहना पड़े तो वह मुझसे कदापि न सहा जायगा; और ऐसा मैं कभी नहीं चाहता कि मेरे लिये तुम्हें कोई अपमान सहना पड़े। इसलिये, प्यारी, हमीदा! अब मैं यही उचित समझताहूं, कि तुम यहांसे अपने घर लौट जाओ; फिर तुम्हारे जाने पर यदि मुझमें कुछ भी सामर्थ्य होगी तो मैं अपनी बंदूक और तलवार की सहायता से राह साफ कर अपनी सेना में जा मिलूंगा और यदि ऐसा न हो सका तो फिर कई अतितायियों का

सिर काट कर इस पहाड़तली में आपभी कट मरूंगा।"

मेरी लंबी चौड़ी बात सुन कर वीरनारी हमीदा खिलखिला कर हंस पड़ी और बोली,—"वाह हज़रत! आपने मुझे ऐसीही नाचीज़ समझ रक्खा है कि मैं इस आफ़त के वक्त आपको अकेला छोड़ कर यहांसे चली जाऊंगी! हर्गिज़ नहीं। क्या सिक्ख मरना जानते हैं और अफ़रीदी औरतें मरना नहीं जानतीं! जनाब! मैंभी लड़कपन ही से मौत के साथ खेलती आती हूं, इसलिये उससे मैं ज़राभी नहीं डरती। फिर आपसे दूर होने के बनिस्वत तो आपके साथ रह कर मरना कहीं अच्छा है! साहब! मेरी जिन्दगी बिल्कुल बेकार है, इस लिये जहां तक जल्द मुझे इस बला से छुटकारा मिले, उतनाहीं अच्छा क्योंकि मुझे अब जीकर करना ही क्या है! इसलिये, प्यारे! मेरे लिये तुम जरा भी फिक्र न करो और इसे सच जानो कि अगर ज़रूरत पड़ेगी तो मैं ख़ुद इस पहरेदार को मार कर तुम्हारी राह साफ़ कर दूंगी और तुम्हें अफ़रीदी सिवाने से बाहर पहुंचा कर, तभी लौटूंगी।"

हमीदा की बातें सुन कर मैं सन्नाटे में आगया और सोचने लगा कि यह स्त्री दानवी है कि देवी, पाषाणी है कि पुष्पमयी और वज्र-हृदया है कि कोमलप्राणा! बस, उस समय मैं सब कुछ भूलकर इन्हीं बातों कोही सोचने लगा और मनही मन यह प्रश्न करने लगा कि यह मौत को इस चाव से क्यों बुला रही है। आह! इस रहस्यमयी युवती के हृदय के निगूढ़ भाव को मैं अभीतक न समझ सका और न यही जान सका कि अब ऐसी अवस्था में मुझे क्या करना चाहिए? मैं जहां पर रुक गया था, उसी जगह खड़े खड़े सोचा किया और इधर धीरे धीरे रात भी बीत चली।

हमीदा ने मुझे चुप चाप खड़े हुए देख कर कहा,—"बस, अब ज़ियादह गौर करने का समय नहीं है, और इतने सोचने की बातही कौन सी है! देखो रातबीत चली, सुबह की सफ़ेदी आस्मान पर दौड़ गई और हमें अभी दूर जाना है।"

मैंने कहा,—"प्यारी हमीदा! मैं तुम्हारीही बातों को सोच रहा था। देखो, दूर से, एकाएक बंदूक दाग कर इस पहरेवाले को मार डालना बहुत सहज बात है, परन्तु इस निरपराध मनुष्य पर इस प्रकार हाथ उठाने में मैं असमर्थ हूं। हां, उसे होशियार करके लड़ना पड़े तो मैं तैयार हूं।"

मेरी बात सुन, ठठा कर हमीदा हंस पड़ी, जिससे कुछ संकुचित होकर मैंने पूछा,—" तुम इस तरह क्यों हंस पड़ीं।"

मेरी बात सुन और मुझसे आंखें मिला कर हमीदा ने मुस्कुराते हुए कहा,—" निहालसिंह ! यक बयक तुम्हारा ऐसा धर्मज्ञान कैसे जाग पड़ा ! अगर तुम धर्म से इतना डरते हो तो बेचारे बेकसूर अफ़रीदियों को कत्ल करने क्यों आए ? क्या इन लोगों ने तुम्हारा कोई कसूर किया है ? और सोचो तो, तुम्हारा क्या कसूर था जो मेरे वालिद ने तुम्हारे कत्ल का हुक्म दिया था ! लेकिन, ख़ैर तुम ज़रा यहीं ठहरो; मैं आगे बढ़ कर पहरेवाले से कहती हूं कि वह मेरा रास्ता छोड़दे। अगर इस तरह काम निकल गया तो ठीक है, वर न फिर तुम्हें अपनी राह साफ़ करने के वास्ते मज़बूर होना पड़ेगा।"

यों कह और मेरे उत्तर का आसरा न देख कर हमीदा आगे बढ़ी और उसके पैर की आहट पाते ही पहरेवाले ने ज़ोर से ललकार कर कहा,—" इस घाटी में कौन चला आरहा है ?"

यों कह और अपनी तल्वार सम्हाल कर वह सिपाही रास्ता रोक कर खड़ा हुआ और हमीदा ने उसके सामने पहुंच कर कहा,— "मैं अफ़रीदी सरदार मेहरख़ां की लड़की हूं और उम्मीद करती हूं कि तुम्हारे लिये इतनाही कहना काफी होगा और तुम मुझे अपने एक साथी के साथ इस घाटी से पार होजाने दोगे।"

हमीदा की बात सुन कर उस सिपाही ने अपने हाथ की मशाल ऊंची कर के उसके मुखड़े को देखा और उसे पहचान, शाहानः आदाब बजा ला कर कहा,—" हज़रत सलामत ! मैंने आपको पहचान लिया। बेशक आप मेरे सर्दार की प्यारी दुख़तर हैं; लेकिन आप मेरी गुस्ताकी मांफ कीजिएगा; आपको इस घाटी के पार होने का परवाना मुझे दिखलाना चाहिए। क्योंकि मैं एक अदना गुलाम हूं और आपके वालिद के हुक्म की तामीली करना अपना फ़र्ज़ समझता हूं।"

पहरेवाले की बातें सुन कर मारे क्रोध के हमीदा जल उठी, पर उसने अपने उमड़ते हुए क्रोध को मन ही मन दबा कर कहा, "बेवकूफ़ सिपाही ! आज यह मैंने नई बात सुनी कि मेहरख़ां की लड़की को भी घाटी से बाहर जाने के लिये परवाना दिखलाना पड़ेगा ! नामाकूल! तू क्या मेरी बेइज्ज़ती करने पर आमादा हुआ है ? बस, हटजा और मुझे इस घाटी से बाहर चले जानेदे।"

हमीदा की बातें सुन कर उस ईमानदार सिपाही ने हाथ जोड़ कर बड़ी नम्रता से कहा,—"हुज़ूर! मैं आपका एक अदना गुलाम हूं, लेकिन बगैर हुक्मनामा दिखलाए, आप कोभी इस घाटी से बाहर नहीं जाने देसकता! गो, आप मेरे मालिक की लड़की हैं, लेकिन आपके वालिद के हुक्म के आगे मैं आपका हुक्म नहीं मान सकता। पस, मैं उम्मीद करता हूं कि अब आप इस बारे में ज़ियादह ज़िद न करेंगी।"

हमीदा ने कड़क कर कहा,—"तो मैं जानती हूं कि अब तेरी मौत आई है!"

सिपाही,—"चाहे जो कुछ हो, लेकिन जब तक मेरे दम में दम रहेगा, मैं अपने सरदार की हुक्म-अदूली हर्गिज़ न करूंगा।"

हमीदा,—"पाजी, गुलाम! तुझे इतना ग़रूर हुआ है कि मेरे हुक्म की बेइज़्ज़ती करता है? क्या तू इस बात को मुतलक भूल गया है कि मेरी तौहीन करने की तुझे कैसी सज़ा दी जायगी? अफ़-सोस, सरदार मेहरखां की लड़की की यह बेइज़्ज़ती!"

इस पर पहरेदार ने और भी नम्रता से कहा,—"बीबी हमीदा! मुझे धमका कर आप मेरे फ़र्ज़ से मुझको हर्गिज़ न गिरा सकेंगी। आपके वालिद ने मुझे ऐसी नसीहत नहीं दी है कि मैं अपने फ़र्ज़ से चूकूं। लेकिन बड़े अफ़सोस का मुकाम है कि आप मुझे नाहक़ ज़ेर करती हैं! अच्छा, अब आप साफ़ सुन लीजिए कि आपके वालिद ने ऐसा ही हुक्म दिया है कि बगैर परवाना दिखलाए, हमीदा भी अफ़रीदी सिवाने के बाहर न जाने पाए। पस, मैं उम्मीद रखता हूं कि अब आप लौट जायंगी, वर न मैं आपको कैद करके आप के वालिद के पास भेज दूंगा; क्योंकि उनका ऐसा ही हुक्म है।"

हमीदा,—"ओफ़! जान पड़ता है कि यह सारी शरारत कमीने अबदुल की है। (पीछे फिर कर) निहालसिंह! अब मैं तुम्हें हुक्म देती हूं कि अगर तुममें कुछ भी मर्दूमी हो तो अपने रास्ते को साफ़ कर डालो।"

जगदीश बाबू! हमीदा के मुंह से इतना निकलते ही इधर से तो बंदूक उठाए हुए मैं झपटा और उधर से मेरे सामने वह सिपाही दौड़ आया। उसने आते ही मेरा निशाना बनाकर बंदूक दाग दी, पर ईश्वर के अनुग्रह से मैं उस वार को बचा गया और उस सिपाही को अपना

निशाना बनाया। पहली ही गोली उसके माथे में लगी और वह गिर कर वहीं रह गया। तब मैंने हमीदा से कहा,—" प्यारी, हमीदा! सम्भव है कि यहां कहीं पासही अफ़रीदी सेना की छावनी हो और बंदूक की आवाज़ सुन कर इधर कुछ सिपाही आजायँ, तो बड़ा बखेड़ा मचेगा; इसलिये अब यही उचित है कि जहांतक जल्द हो सके, इस घाटी से पार पहुंचना चाहिए।"

"हां, यह तो सही है;" इतना कह कर हमीदा आगे हुई और मैं उसके पीछे पीछे चला। उस समय चलते चलते हमीदा ने एक लंबी सांस ली और धीरे धीरे आप ही कह उठी,—"अफसोस! आज मेरे वालिद का एक ईमानदार सिपाही मारा गया!"

मैंने उदासी से कहा,—" किन्तु सुन्दरी, हमीदा! मैंने केवल तुम्हारी आज्ञा का पालन किया।"

हमीदा,—" निहालसिंह! इस बारे में मैं तुमको कसूरवार नहीं बनाती! ओफ़ एहसान का बदला चुकाना कितना मुश्किल है!"

निदान, फिर हम दोनो चुपचाप उस घाटी में, जहां तक हो सका, जल्दी जल्दी चलने लगे। यद्यपि सवेरा होगया था, पर कुहेसे के कारण घाटी में पूरा पूरा उंजाला नहीं हुआ था। यद्यपि वह रास्ता बहुतही बीहड़ और भयानक था, पर मेरे आगे राह दिखलाने वाली हमीदा थी, इसलिये मुझे विशेष कष्ट नहीं हुआ।

दसवां परिच्छेद

निदान, उस घाटी में हम दोनों चुपचाप चलने लगे। आगे हमीदा थी, और उसके पीछे मैं था; पर दोनो ही चुपचाप थे। जहां जहां बहुतही बीहड़ और ऊबड़- खाबड़ रास्ता आता, हमीदा का सहारा लेकर मैं चलने लगता। यद्यपि हम दोनो चाहते थे कि जहांतक होसके, शीघ्र इस घाटी से पार हों, पर वह रास्ता इतना बीहड़ था कि उसमें जलदी चलने की इच्छा करना, मानो प्राण से हाथ धोना था।

यह बात तो मैं कही आया हूं कि हमीदा मुझे जी जान से चाहने लग गई थी और मैं उसे प्राण से बढ़ कर प्यार करने लग गया था; पर अब रह रह कर मेरा प्राण व्याकुल होने लगा। क्योंकि यह बात मैं जानता था कि अफ़रीदी सिवाने से पार होतेही हमीदा मुझसे बिदा होगी और मेरे सरस हृदय को मरुभूमि बना डालेगी। मुझे छोड़ने पर उसके जीपर कैसी बीतेगी, इसे तो वह जाने, पर इसे छोड़ने पर कदाचित मुझे अपना प्राण छोडना पड़े तो कोई आश्चर्य नहीं।

जगदीशबाबू! जिस समय मैं पीड़ित अवस्था में हमीदा के गुप्तगृह में पड़ा पड़ा सोचता था कि इस आकस्मिक प्रेम का परिणाम क्या होगा! उस समय मैं यह नहीं जान सका था कि हमीदा इतनी जल्दी मुझसे दूर होगी! हाय, क्या इतना शीघ्रही हमीदा को छोड़ना पड़ेगा और इसे मैं पञ्जाब लेजाकर अपने जीवन की संगिनी न बना सकूंगा।

निदान रामराम करके मैं उस घाटी के पार हुआ और सामने चमकते हुए भगवान भास्कर को बहुत दिनों के पश्चात देखकर प्रणाम किया। उस समय एक वृक्ष की छाया में, एक शिलाखंड पर हमीदा ने मुझे बैठाया और मेरे बलग में स्वयं बैठ और बड़े प्यारा से मेरे गले में बाहें डालकर उसने कहा,—"प्यारे, निहालसिंह! तुम अफ़रीदी सिवाने के करीब पहुंच गए। (हाथ से एक ओर को दिखाला कर) बस, इस राह से एक कोस के करीब चले जाने पर तुम अफ़रीदी सिवाने से बाहर हो जाओगे। इसलिये अब मैं तुमसे रुख़सत होती हूं और मेरे सबब जो कुछ तकलीफ़ तुमने बर्दाश्त की, उसके लिये मांफ़ी चाहती हूं।"

हाय, इतनी जल्दी प्यारी, हमीदा, मुझसे बिदा हो कर मेरे हृदय

को मरुभूमि बना डालेगी, इसका अब तक मुझे ध्यान ही न था । सो उसके एकाएक ऐसा कहने से मैं चिहुंक उठा और एक ठंढी सांस भर कर मैंने कहा,—" प्यारी, हमीदा ! क्या तुम इतनी जल्दी मुझे छोड़ दोगी ? "

यह सुनकर हमीदा ने एक गहरी सांस ली और कहा,—" क्या करूं, मज़बूरी है । लेकिन खैर, अगर तुम कभी कभी मुझे याद कर लोगे तो, चाहे मैं कहीं रहूं, मेरी रूह ज़रूर आसूदः हो जाया करेगी ।"

मैंने अपना कलेजा मसोस कर कहा,—" प्यारी, हमीदा ! मेरे कंधे के घाव का निशान, जोकि जन्मभर न मिटेगा, तुम्हारी बराबर याद दिलाया करेगा । "

यह सुन कर हमीदा हंस पड़ी और बोली,— "आह, तो क्या मेरी यादगारी की सिर्फ इतनी ही कीतम है ! अफ़सोस ! मगर खैर, यह तो कहो कि अब जख्म में दर्द तो नहीं होता ? "

मैंने कहा,— " नहीं, अब दर्द बहुतही कम है, जो दो चार दिन में ही छूट जायगा, परन्तु बीबी हमीदा, यह तो कहो कि तुमने मुझे जल्लादों के हाथ से क्यों कर बचाया ? "

हमीदा,—"आह ! यह सवाल तो तुम सैकड़ों मर्तबः कर चुकेहो।"

मैंने कहा,—"परन्तु अब इसे अन्तिम प्रश्न ही समझो, इसलिये इस रहस्य को अब मुझपर कृपा कर प्रगट कर दो । "

हमीदा,—"खैर, अगर ऐसी ही तुम्हारी मर्जी है तो सुनो। वालिद ने मुझपर भी कड़ा पहरा बैठा दिया था, इसलिये मैं फिर तुमसे मिल नहीं सकी थी, पर मैं तुम्हें भूली न थी। सो जब तुम्हारे मार डालने के वास्ते तीन जल्लाद मुकर्रर किये गए, जिनमें एक अबदुल भी था, तो मैंने बहुतसी अशर्फियां देकर दो जल्लादों को अपने काबू में कर लिया, पर अबदुल से मैंने कुछ भी बात न की, इस ख़याल से कि, कहीं मेरी बंदिश ज़ाहिर न हो जाय। सो उन दोनो जल्लादों की बंदूकों में गोलियां न थीं, सिर्फ़ अबदुल की बंदूक की गोली तुम्हारे कंधे में लगी, जिसके लगतेही तुम बेहोश होकर वहीं गिर गए। तब अबदुल ने तुम्हें मरा समझ कर उन दोनो से कहा कि,—" इस मुर्दे को कहीं पर फेंक दो और इसके गले में से याक़ूतीतख़्ती उतार कर मेरे हवाले करो। " यों कह कर जब वह कंबख्त चला गया तो वे दोनो जल्लाद तुम्हें उठाकर मेरे पास ले आए और अबदुल से उन्होंने यह कह

दिया कि,—"याकूती तख्ती बीबी हमीदा ने बीच रास्तेही में हम दोनों से ज़बर्दस्ती लेलिया।' गरज़ यह कि उन दोनो को बिदाकर मैं अपनी बहिन की मदद से तुम्हें उस जगह उठा लेगई, जहां पर तुम होश में आए थे। फिर मैंने बड़ी मुश्किल से गोली निकाली और जहां तक मुझसे होसका, मैंने तुम्हारी दवादारू करी। मैं इन बातों के ज़ाहिर करने की ज़रूरत नहीं समझती थी, पर तुम्हारी ज़िद से मुझे आख़िर यह हाल कहना ही पड़ा।"

यह सुन कर मैंने हमीदा को गले से लगा लिया और उसके गालों को चूम, बड़े दुःख से कहा,—"हाय, हमीदा! जिस अभागे को तुमने एक बार मृत्यु के मुख से निकाल कर बचाया, आज उसी को तुम ख़ुशी से मौत के हवाले कर रही हो!"

यह सुन कर हमीदा कांप उठी और आंखों में आंसू भर कर कहने लगी,—"प्यारे, निहालसिंह! तुम अपने दिल से ही मेरे भी दिल का हाल दर्याफ्त कर लो कि इस वक्त मेरे दिल पर भी कैसी कयामत बरपा होरही है! लेकिन मैं लाचार हूं। यह तुम यकीन रक्खो कि अब सिवा तुम्हारे हमीदा किसीकी भी न होगी, और सिर्फ़ तुम्हारी ही याद में यह तहेग़ोर पहुंचेगी; लेकिन ऐसा यह कभी न करेगी कि अपने मुल्क, अपने मज़हब, अपनी कौम, और अपने बाप को छोड़ तुम्हारा साथ पकड़े और दुनियां की फिटकार सहे। इसीलिये अब यही बिहतर है कि तुम मुझे बिदा करो और मैं यहांसे चली जाऊं। प्यारे निहालसिंह! यह कभी मुमकिन नहीं है कि अब जीते जी तुम्हारी हमारी फिर कभी मुलाकात होगी; इसलिये अगर होसके तो तुम मुझे भूल जाने की कोशिश करना।"

मैंने कहा,—"और हे पत्थर! तुम! तुम क्या करोगी? क्या तुम भी मुझे भूल जाने के लिये 'कोशिश' करोगी?"

हमीदा,—"प्यारे, यह गैर मुमकिन है, कि मैं तुम्हें जीते जी कभी भूल सकूं!"

मैंने कहा,—"तो आओ, पाषाणी! बस, बिदा होते समय आपस में मिल भेंट तो लें।"

यों कह कर मैंने हमीदा को कसकर गले से लगा लिया और उसने भी मुझे अपने भुजपाश में जकड़ लिया। हमदोनो प्रेमान्ध होकर एक दूसरे के अधरोष्ठ के आसव का पान करने लगे और वाह्य जगत का ख़याल किसीको भी न रहा।

ग्यारहवां परिच्छेद

कुछ देर तक मैं चुप था, हमीदा भी चुप थी; फिरमैने उसकेहाथ को अपने हाथ में लेकर कहा,—

"प्यारी, हमीदा! जिस दिन, उस प्रदोष काल के समय मैने आततायी गोर्खों के हाथ से तुम्हारी रक्षा की थी, उसी दिन, उसी समय मैं तुम पर मोहित हो गया था; परन्तु इतना साहस नहीं होता था कि मैं अपना प्रेम तुम पर प्रगट करूं। मैने मनही मन यह निश्चय कर लिया था कि इस प्राण को चुपचाप तुम्हारे अर्पण कर दूंगा और जन्मभर तुम्हारी ही याद में रह कर अन्त में तुम्हारी ही चिन्ता करते करते मर जाऊंगा; परन्तु प्यारी, हमीदा! तुम्हारे प्रत्येक कार्य से ऐसा ज्वलंत प्रेमासव प्रगट होने लगा कि अन्त में मुझे अपना सच्चा प्रेम तुम पर प्रगट कर ही देना पड़ा।"

हमीदा ने कहा,—"तो, प्यारे, निहालसिंह! मैने भी तुमसे कब अपना 'प्रेम' छिपाया! और सच तो यह है कि जब तुमने उन पाजी गोर्खों के हाथ से मेरी आबरू बचाई थी, तभी,—ठीक उसी समय, मैं भी तुम पर हज़ार जान से आशिक हो गई थी। तभी तो मैने इतनी ज़िद कर के अपनी 'याकूतीतख्ती' तुम्हारी नज़र की थी। मैं भी, प्यारे! यही तय कर चुकी थी कि अपना इश्क तुम पर हर्गिज़ ज़ाहिर न करूंगी और तामर्ग सिर्फ़ तुम्हारी ही याद में इस ज़िन्दगी को बसर कर दूंगी; लेकिन मुझसे भी ऐसा न होसका और आख़िर दिल की कमज़ोरी के सबब वह ज़ाहिर हो ही गया। किसीने सच कहा है कि इश्क और मुश्क की बू लाख छिपाने पर भी नहीं छिपती।"

मैने कहा,—"इसीसे तो कहता हूं, प्यारी! कि जब परस्पर प्रेम प्रगट हो ही गया और अब अलग होने से प्रत्येक प्रेमी की जानों पर आ बनेगी तो अब क्यों न हम दोनो सदा के लिए एक हो जायं और कभी एक दूसरे से जुदा न हों।"

हमीदा कहने लगी,—"प्यारे! यह तुम्हारा कहना सही है कि जुदाई का सदमा बड़ा बुरा होता है और इसमें आशिकों की जानों पर आ बनती है, लेकिन मैं बहुत ही परीशान हूं कि अब क्या करूं? एक

ओर तो मुझे इश्क तुम्हारी तरफ़ खैंचता है और दूसरी ओर दानिशमन्दी मुझे अपने वतन की तरफ़ खैंचकर अपनी आज़ादी की तरफ़ ख़याल दिलाती है। ऐसी हालत में, मैं निहायत परीशान हूं कि क्या करूं! लेकिन, मैं जहां तक सोचती हूं, यही बिहतर समझती हूं कि चाहे अपने दिल का ख़ून करूं. लेकिन अपने वालिद, अपना मज़हब, अपना मुल्क और अपनी आज़ादी हर्गिज़ न छोड़ूं। ऐसी हालत में, प्यारे निहालसिंह! मैं निहायत मजबूर हूं और बड़ी आजिज़ी के साथ अब तुमसे रुख़सत हुआ चाहती हूं। मैं यह बात कह भी चुकी हूं और फिर भी कहती हूं कि हर हालत में हमीदा तुम्हारी ही रहेगी और अख़ीर दम तक इसका हाथ कोई गैर शख्स नहीं पकड़ सकेगा।"

मैंने कहा,—"लेकिन, प्यारी, हमीदा! यह कैसा इश्क होगा कि मैं उधर तुम्हारी जुदाई में तड़प तड़प कर अपना दम दूंगा और तुम इधर तनहाई में छटपटाकर अपनी जान खोवोगी। इससे तो यह कहीं अच्छा होगा कि तुम मुझपर और मेरे प्रेम पर भरोसा रक्खो और मेरा साथ न छोड़ो। यह तुम निश्चय जानो कि निहालसिंह के पास इतनी दौलत ज़रूर है कि वह जीते जी तुम्हें किसी बात का कष्ट नहीं होने देगा।"

हमीदा बोली,—"लेकिन, प्यारे! तुम्हारे पास वह दौलत कहां है. जिसकी हमीदा को चाह है; यानी आज़ादी! बस. इसके अलावे और मैं किसी दौलत की ख्वाहां नहीं हूं। और जो तुमने 'कष्ट' की बात कही, सो तुम्हारे साथ रहने में जितना आराम मुझे महलों में मिल सकता है, उससे कम चैन जंगल पहाड़ों की झोंपड़ी में नहीं मिल सकता। और फिर इन बातों की ज़रूरत क्या है? देखो, सूरज और कमल की और चांद और चकोर की मुहब्बत कितनी दूर रहने पर भी बराबर निभी जाती है!"

मैंने कहा,—"किन्तु जल और मीन की तथा दीपक और पतंग की प्रीति का क्या परिणाम होता है?"

यह सुनकर हमीदा हंस पड़ी और बोली,—ख़ैर, तुम मुझे मछली और परवानः समझ कर ही सब्र करो!"

मैंने कहा,—"जब कि तुम्हारे यहां ऐसा अन्याय है तो फिर झख मार कर मुझे सभी कुछ सहना पड़ेगा; किन्तु प्यारी, हमीदा! तुम इतना ज़ुल्म न करो और मेरे ख़ून से अपनी प्यास न बुझाओ।"

हमीदा,—" लेकिन, निहालसिंह ! यह गैर मुमकिन है । देखो, सोचो तो सही, तुम्हारे ख़ातिर मैंने क्या क्या न किया । अपने मुल्क, अपने वालिद, अपनी कौम और अपने मज़हब के बिलकुल ख़िलाफ़ कार्रवाइयां मैंने कीं । गो, तुम अब मेरे दोस्त हो, लेकिन मेरे मुल्क, मेरी कौम और मेरे मज़हब के तो तुम पूरे दुश्मन हो । ऐसी हालत में मैंने तुम्हारी तरफ़दारी करके कितना बड़ा गुनाह किया है ! क्या मेरे इन गुनाहों की मांफ़ी होसकती है ? हर्गिज़ नहीं: ऐसी हालत में भला अब मैं तुम्हारा साथ क्यों कर देसकती हूं ।

मैंने कहा,—" तो क्या अब तुम मुझसे बिदा होकर अपने पिता के पास लौट जाओगी । "

हमीदा,—" हां ज़रूर लौट जाऊंगी और अपना सारा कसूर अपने वालिद पर ज़ाहिर करके उनसे अपने इन गुनाहों की सज़ा लूंगी । "

हमीदा की यह बात सुन कर मैं कांप उठा और बोला,—" क्या सारी बातें तुम अपने पिता पर प्रगट कर दोगी, "

हमीदा,—"हां, कुल बातें ज़ाहिर कर दूंगी । यहां तक कि तुम्हारी मुहब्बत और उस पहरेदार के मरवाने का हाल भी छिपा न रक्खूंगी।"

मैंने कहा,—"तो मुझे विश्वास है कि तुम्हारा बाप तुम्हारे अपराधों को क्षमा कर देगा "

हमीदा,—"तुम्हारा ऐसा समझना सरासर भूल है । क्योंकि मेरा वालिद इस मिज़ाज का आदमी नहीं है कि मेरे कसूरों का हाल सुन कर वह मुझे माफ़ कर देगा । "

मैं,—"तो फिर वह कौनसी सज़ा तुमको देगा ! "

हमीदा,—"कत्ल की सज़ा, और यही मैं चाहती भी हूं ।"

यह सुन कर मैं एक दम थर्रा उठा और कहने लगा,—"हाय, तुम क्या किया चाहती हो ! "

हमीदा,— "निहालसिंह ! तुम्हारे बग़ैर मैं जी कर क्या करूंगी ! भला, तुम्हारी जुदाई से मेरी जान बच सकेगी ! ऐसी हालत में मैं यही बिहतर समझती हूं कि अपने कसूरों को अपने वालिद पर ज़ाहिर कर के उनसे कत्ल की सज़ा पाऊं । और अगर उन्होंने मुझ पर रहम किया, यानी मुझे मुआफ़ किया और मुझे कत्ल की सज़ा न दी, तो भी मैं अब ज़्याद: दिन न जीऊंगी और बहुत जल्द ख़ुदकुशी करके इस इश्क की आग से अपनी रूह को बचा दूंगी । "

हमीदा की बातों ने मुझे घबरा दिया और मैं यही सोचने लगा कि यह पठानी युवती देवी है कि राक्षसी ! निदान, देर तक मैंने उसके साथ अपना सिर ख़ाली किया, पर वह अपने हठ से न हटी और उसने "ना" से "हां" न किया। अन्त में वह उठी, मैं भी उठा और मेरे गले से वह लपट गई। मैंने भी उसे ज़ोर से अपने हृदय से लगा लिया और परस्पर चौधारे आंसू बहाते हुए एक दूसरे के अधरोष्ठ का ख़ूब चुंबन किया। न जाने वह अवस्था हम दोनों की कब तक रहती, यदि वहां पर की एक झाड़ी में से यह आवाज़ न आती कि,—

"हमीदा ! तेरा कत्ल तो तेरा बाप ख़ुद करेहीगा, लेकिन, तेरे आशिक का ख़ून मैं अभी पीए लेता हूं; क्योंकि हमीदा के दो चाहनेवाले दुनियां में जी नहीं सकते।"

यह आवाज़ सुनतेही हम दोनो एक दूसरे के आलिंगन से अलग हुए और जिधर से वह आवाज़ आई थी, उस ओर अपनी अपनी दृष्टि को दौड़ाने लगे। मैंने और हमीदा ने भी—देखा कि उपर्युक्त कटूक्ति का छौंकनेवाला सिवाय पाजी अबदुल के और कोई न था। किन्तु जब तक मैं सम्हलूं अबदुल अपना बरछा तान कर मुझपर झपटा; किन्तु उसके पीछे से एक नौजवान ने झपट कर उसकी गर्दन पर ऐसी तल्वार मारी कि उसका सिर भुट्टासा छटक कर दूर जा गिरा और धड़ भी ज़मीन में गिर कर तड़पने लगा। यदि उस समय उस अज्ञातनामा नवयुवक ने ऐसी अपूर्व सहायता न की होती तो निश्चय था कि सम्हलने के पहले ही अबदुल मुझे मार गिराता और फिर हमीदा की भी जान कदाचित व्यर्थही जाती, किन्तु बहुत ठीक समय पर उस नवयुवक ने वहां पहुंच कर मेरी और हमीदा की भी सहायता की।

किन्तु जब धन्यवाद देने के लिये हमीदा और मैं—दोनो उसकी ओर बढ़े तो उस नवयुवक ने हमीदा का हाथ पकड़ कर कहा,—

"प्यारी, बहिन, हमीदा ! मैं तो तुम्हारी अज़ीज कुसीदा हूं !"

बारहवां परिच्छेद

कुसीदा ! आश्चर्य !!! इस नवयुवक वीर के बेश में कुसीदा!!! और क्यों न हो, जबकि वह सब भांति से अपनी बहिन हमीदा के अनुरूप ही थी ।

निदान, कुसीदा को पहचान कर हमीदा उसके गले से लपट गई और बोली,-" प्यारी बहन, कुसीदा ! तू यहां क्योंकर आई ? "

कुसीदा,—"बहिन ! तुम्हारे हुक्म बमूजिब मैं इस बात की चौकसी करती थी कि जिसमें तुम्हारे गायब होने का हाल किसीको भी न मालूम हो; लेकिन न जाने क्यों कर तुम्हारे गायब होने का हाल अबदुल को मालूम होगया । तब उसने तुमपर किसी किस्म का शक करके उन जल्लादों से निहालसिंह के बारे का सच्चा हाल दर्याफ्त कर लिया और वालिद से सारा हाल बयान कर के कुछ थोड़ी सी फ़ौज के साथ तुम दोनों की गिरफ्तारी के लिये वह इधर रवाने हुआ । यह हाल जान कर मैंने पहिले तो उन दोनो जल्लादों को मार डाला, जिन्होंने तुम्हारे पोशीदा राज़ को अबदुल पर खोल दिया था; फिर मैं एक नौजवान की सूरत बन कर अबदुल की फ़ौज में आमिली और बराबर उसके साथ रही । यहां आकर उसे यह मालूम हुआ कि,— ' चमन की घाटी में एक पहरेदार गोली से मारा हुआ पडा है । ' यह जानकर उसने इसे तुम्हाराही काम समझा और इस ओर को उसने कूच किया । अभी थोड़ी देर हुई कि वह यहां पहुंचा और अपनी फ़ौज को एक जगह पर, जो कि यहांसे थोड़ी दूर पर है, ठहरा कर तुम्हें खोजता हुआ इधर आया । मैं भी उसकी नज़रों से बचती हुई उसके पीछे लगी और यहां पर आकर उसके पासही एक झाड़ी में छिप रही । बस, जब भाला लेकर वह इन पर (निहालसिंह की ओर इशारा करके) झपटा तो मैंने पीछे से दौड़ कर इस पाजी का काम तमाम कर दिया।"

अपनी योग्य बहिन की ज़बानी यह हाल सुनकर हमीदा उससे लपट गई और बड़े प्यार से उसके मुखड़े पर हाथ फेरती हुई बोली,— "प्यारी, बहिन! तूने बड़ा काम किया, वर न आज मेरे प्यारे निहालसिंह के दुश्मनों की जान जाही चुकी थी । "

कुसीदा,—" लेकिन, बहिन ! अब तुम लोग यहां पर एक लहज़: भी न ठहरो, क्योंकि अवदुल के लौटने में जब ज्याद: देर होगी तो अजब नहीं कि उसके ढूंढने के लिये कोई फ़ौजी सिपाही इधर आजाय। "

मैने पूछा,—" इस फ़ौज में कितने सिपाही हैं ? "

कुसीदा,—" पांचसौ । "

तब हमीदा ने मुझसे कहा,—" बस, प्यारे, लाओ, हाथ मिलाओ और मुझे रुख़सत करो; क्योंकि अब यहां पर ठहरना सरासर जान देना है । "

कुसीदा,—(हमीदा से) " लेकिन, बहिन ! तुम लौट कर अब जाओगी कहां ? तुम्हारे कत्ल का तो वालिद ने आम तौर से इश्तहार देदिया है। पस जो वालिद अपनी लड़की के कत्ल का इश्तहार देता है, उसका मुंह देखना कौन लड़की चाहेगी । "

हमीदा,—" आखिर, मैं तो मरना चाहती ही हूं । "

हमीदा,—" लाहौलबलाक़ूवत ! क्या हिमाकत की बातें, बहिन ! तुम करने लगीं ? तुम क्या कुत्ते की मौत मरना चाहती हो ! "

हमीदा,—" तो क्या करूं ? "

इस पर मैंने कहा,—" बस, प्यारी ! तुम मेरा कहा मानो और मेरे साथ चलो । "

कुसीदा,—" बस, इससे बिहतर और कोई बात नहीं होसकती।"

हमीदा,—(आश्चर्य से) " यह तुम क्या कहती हो ? "

कुसीदा,—" मैं बहुत ठीक कहती हूं ! अब तुम अपने आशिक़ का साथ दो और नाहक अपनी नौजवानी को मिट्टी में न मिलाओ ।"

मैने कहा,—"इसी बात पर इनके साथ मेरी देर से हुज्जत होरही है, पर यह किसी तरह मेरी बात मानती ही नहीं ।"

कुसीदा,—" नहीं, बहिन ! अब तुम कुछ आगापीछा, न सोचो और अपने चाहनेवाले के साथ जाओ । क्योंकि यहां अब किसी तरह भी तुम्हारी जान की ख़ैर नहीं है । "

हमीदा,—" लेकिन, प्यारी कुसीदा मैं तो — — —"

कुसीदा,—" बस. अब ज्याद; बकबक न करो और जल्द यहांसे भागो, वर न ख़ैर नहीं होगी । और हमीदा ! अगर तुहें अपने आशिक का साथ नहीं देना था तो नाहक तुमने इस गैरआईनी इश्क़ के मकतब

में क़दम क्यों रक्खा ? ”

मैं कुसीदा के ऊपर अत्यन्त प्रसन्न हुआ और मनहीमन उसे कोटि कोटि धन्यबाद देने लगा; क्योंकि उसने हमीदा से मेरे ख़ातिरख़ाह सिफ़ारिश की थी ।

निदान, बहुत कुछ कहने सुनने पर अन्त में हमीदा मेरे साथ चलने पर राज़ी हुई और कुसीदा से बोली:—” लेकिन प्यारी, बहिन ! मेरे जाने पर तुम्हारे ऊपर तो कोई आंच न आवेगी ? ”

कुसीदा,—“ क्या सच्ची बात कहूं ? ”

हमीदा, —“ हां, हां, सचही कहो । ”

कुसीदा,—“ महल में मेरे न रहने के सबब वालिद ने मेरे क़त्ल का भी इश्तहार देदिया है । इसी सबब से मैं मरदानी लिबास में भेस बदल कर अबदुल के गरोह में मिली थी ! ”

हमीदा,—“ तो तुम कहां जाओगी । ”

कुसीदा,—“ मै क़ब्र में जाऊंगी, क्योंकि मेरा मरना जीना, बराबर है और इसका सबब यह है कि अभीतक मैं हज़रत-ई-इश्क के चकाबू में नहीं फंसी हूं । ”

हमीदा,—“ लेकिन, प्यारी, बहिन! ऐसा हर्गिज़ नहीं होसकता कि मैं अपनी जान तो बचाऊं और तुम्हें जल्लादों की तल्वार के साये तले छोड़ जाऊं। इससे तो यही बिहतर होगा कि तुमभी मेरे साथ चलो और जिस तरह मेरे साथ पैदा हुई हो, उसी तरह हर हाल में मेरा साथ दो।”

यह सुनकर मैंने कहा,—“ कुसीदा बीबी ! यह बात आपकी बहिन ने बहुत अच्छी कही है । इसलिये यह बहुत ही अच्छा होता, यदि आपभी अपनी बहिन के साथ मेरे घर चलतीं । वहां जाने पर आपको भी कोई न कोई सच्चा आशिक़ मिलही जायगा और तब आप भी अपनी नौजवानी को बिल्कुल बेकार. और जवाल न समझेंगी । ”

निदान, दोनो बहिनें चलने के लिये तैयार हुईं और हमीदा आगे, मैं बीच में और कुसीदा पीछे पीछे चली । परमेश्वर की दया से फिर मुझे कोई कष्ट वा दुःख न झेलना पड़ा और न किसी अफ़रीदी सिपाही का सामना हुआ । दोपहर ढलते ढलते मैं अफ़रीदी सीमा से बाहर हुआ और अपने कैम्प में पहुंच गया ।

मैंने अपने घाव को दिखला कर सारा हाल अपने अफ़सर और महाराजा साहब से कहा, जिसे सुनकर वे दोनो बड़े प्रसन्न हुए और

महाराजा साहब पटियाले ने अपनी थोडीसी फ़ौज के साथ उनदोनो-हमीदा और कुसीदा को पटियाले भेज दिया और मैं इसी 'सीमान्त संग्राम' में रह गया।

फिर जब उस लबड़धौंधों से मैने छुट्टी पाई, अर्थात असभ्य अफ़रीदियों से हैरान होकर जब अंगरेज़ी फ़ौज लौटी तो मैने सदा के लिये अंगरेज़ी नौकरी छोड़दी और पटियाले से उनदोनो बहिनो को साथ लेकर यहां जी बहलाने के लिये आया।

निहालसिंह की इतनी कहानी सुनकर मेरे मुहं में पानी भर आया और मैने पूछा;—" तो क्या वे दोनो अब तुम्हारे साथ हैं ? "

निहालसिंह,—" हां, दोनों साथ हैं, पर जबतक कुसीदा को भी कोई एक आशिक न मिल जायगा, हमीदा मेरे साथ शादी न करेगी। "

मैने कहा,—" तो क्या मैं कुसीदा के प्रेम का प्रसाद पासकता हूं ?"

इतना सुन कर निहालसिंह उठ खड़े हुए और बोले,—" अच्छा, चलो, अब डेरे पर चलैं ; क्यों कि अंधेरा हो गया है। आज मैं कुसीदा और हमीदा से तुम्हारे बिषय में बातें करूंगा और कल उन दोनो से तुम्हारी भेंट करा दूंगा ; फिर यदि तुम कुसीदा के पाने का प्रयत्न कर सको तो ठीक है, नहीं तो इस विषय में इससे अधिक और मैं कुछ नहीं कर सकता। "

निदान, फिर तो हम दोनो मित्र लौट कर डेरे पर आए। फिर निहालसिंह तो दूसरे दिन मिलने की प्रतिज्ञा कर के अपने डेरे पर चले गए और मैं पलंग पर पड़ कर कुसीदा का सपना देखने लगा।

क्या स्वप्न सत्य नहीं है ! अवश्य है ; क्यों कि भगवान् श्रीकृष्ण-चन्द्र के पौत्र अनिरुद्धजी ने वाणपुत्री उषा को स्वप्न ही में प्रथम प्रथम देखा था। सो उषा ने अनिरुद्ध को, और अनिरुद्ध ने उषाको जो स्वप्न में देखा था ; वह स्वप्न ऐसा था कि जिसके पहिले जाग्रत अवस्था में उन दोनो में से एक ने भी अपने प्रणयी या प्रणयिनी का कुछ भी वृत्तान्त नहीं सुना था ; केवल स्वप्न में ही एक दूसरे ने एक दूसरे को देखा था।

किन्तु मैने तो अपने मित्र निहालसिंह से कुसीदा का पूरा वृत्तान्त सुना था, इसलिये ऐसी अवस्था में यदि मैने उसे स्वप्न में भली भांति देखा तो इसमें आश्चर्य की कौन सी बात हुई ?

साहित्यकारों ने अनुराग के उत्पन्न होने के अनेक कारणों में से चार

कारणों को सबसे प्रधान माना है,—यथा—श्रवणजन्मा, स्वप्नजन्मा, चित्रजन्मा और साक्षातजन्मा। इनमें श्रवणजन्मा अनुराग दमयन्ती को हुआ था, स्वप्नजन्मा अनुराग उषा को हुआ था, चित्रजन्मा अनुराग प्रभावती को हुआ था और साक्षातजन्मा अनुराग तपती को हुआ था। सो इन चारों में से जहां अनुराग के उत्पन्न करने में एक कारण भी विशेष बलवान हुआ था, तो ऐसी अवस्था में मेरे चित्त में कुसीदा को लक्ष्य करके महा महा अनुराग क्यों न उत्पन्न होता, जब कि मैंने श्रवणद्वारा भी कुसीदा के वृत्तान्त को सुना और उसके रूप का चिन्तन करते करते स्वप्न में भी उसे देखा ? इसलिये पाठकों को समझना चाहिए कि मैंने स्वप्न में कुसीदा को भली भांति देखा था।
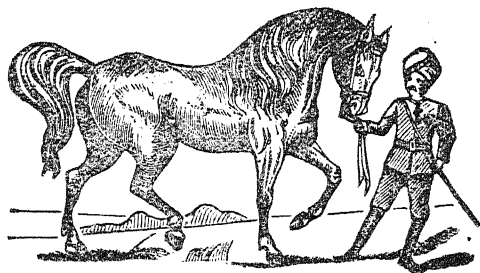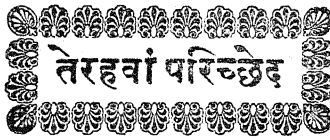
तेरहवां परिच्छेद

प्रातःकाल उठकर मैंने शीघ्रही अपने नित्यनेम को समाप्त किया और अच्छे कपड़े पहनकर मैं निहालसिंह की बाट जोहने लगा। उस समय मुझे एक एक पल, एक एक युग के समान बीतने लगे और मैं मनही मन निहालसिंह को कोसने लगा! कई बार मेरे मन में यह धुन उठी कि मैं स्वयं निहालसिंह के डेरे पर चलूं और जैसे बने, जल्दी ही कुसीदा को अपने हृदय से लगालूं, किन्तु उस समय मेरे चित्त की सब वृत्तियां इतनी अचल होगई थीं कि कई बार उठनेपर भी मैं अपने डेरे के दरवाज़े से बाहर एक पग भी न निकल सका। योहीं राह तकते तकते जब मैं एक प्रकार से दशम दशा को पहुंच गया था, तब मानों प्राणदाता धन्वन्तरि के समान ठीक दस बजे निहालसिंह मेरे सामने आ खड़े हुए। उन्हें देखतेही मैं इस तेज़ी के साथ उठ खड़ा हुआ, जैसे प्राण के लौट आने पर मुर्दा उठ खड़ा होता है।

निदान, मैंने बड़े तपाक से निहालसिंह से हाथ मिलाया और कहा,—" आह, मित्र! तुमने तो राह दिखलाते दिखलाते मेरी जान ले डाली।"

यह सुनकर निहालसिंह हंस पड़े और कहने लगे,—" यदि मैं जानता कि तुम कुसीदा के लिये इतने पागल हो उठे हो तो मैं और भी देर करके आता, क्योंकि ऐसी उन्मत्तावस्था में मैं तुम्हें उन सुन्दरियों के पास लेजाना उचित नहीं समझता, इसलिये कि यदि तुम कहीं ऐसी चंचलता में कुछ अनुचित कर बैठो तो फिर बना बनाया सारा खेल चौपट होजायगा। अतएव, तुम आज अपने चित्त के उद्वेग को शान्त करके अच्छे खासे मनुष्य बनलो, फिर कल तुम्हें लेजाकर कुसीदा से मिलाऊंगा।"

निहालसिंह की जहरीली बातें सुनकर मेरे सारे बदन में आग लग गई और मैंने अपनी भरी हुई पिस्तौल को हाथ में लेकर कहा,—"निहाल सिंह! सचमुच मैं इस समय पागल होरहा हूं। अतएव यदि ऐसी अवस्था में तुम मुझसे ठट्ठा करोगे तो मैं अभी गोली मारकर अपनी जान देदूंगा।"

किन्तु मेरी बात पूरी भी न होने पाई थी कि न जाने किस ढंग से निहालसिंह ने मेरे हाथ से पिस्तौल छीन ली और उसकी गोली आकाश में छोड़ कर कहा,—" वाह, भई ! तुमतो केवल कुसीदा का वर्णन ही सुन कर इतने बहक गए ! तो फिर उसके देखने पर तुम्हारी क्या अवस्था होगी ! "

मैंनेकहा,—" निहालसिंह ! मैं तुम्हारी बिनती करताहूं, कृपाकर तुम इस समय मेरे हृदय की मेगज़ीन में आग न लगाओ। "

यह सुनकर निहालसिंह खूब ज़ोर से हंसपढ़े और कहने लगे,—" अस्तु, चलो ! कल रात को मैंने तुम्हारा सारा हाल हमीदा और कुसीदा से कहा था, जिसे सुनकर दोनों बहिनें बहुत ही प्रसन्न हुईं और मुझे आशा है कि तुम्हें देखकर, जैसी कि उनकी इच्छा है, दोनो बहुत ही खुश होंगी और कुसीदा तुम्हें अपना हृदय समर्पण करेगी। "

यह सुन कर मैं बहुतही प्रसन्न हुआ और निहालसिंह के साथ उनके डेरे पर पहुंचा। वहां पहुंचने पर उनदोनों बहिनों ने उठकर मेरी अगवानी की और बड़े आदर से मुझे एक बढ़ियां गलीचे पर ला बैठाया। उस समय निहालसिंह किसी दूसरे कमरे में चले गए थे, इसलिये कि जिसमें मुझे कुसीदा के साथ बात चीत करने का अवसर मिले।

मैं उन दोनों बहिनों को देखकर बहुत ही चकित हुआ ! यदि उनदोनो के गालों के तिल का वृत्तात मैंने निहालसिंह से न सुना होता तो मैं यह कभी न जान सकता कि इन दोनो बहिनों की सूरत शकल या रूपरंग में क्या अन्तर है ! किन्तु उस तिल के रहस्य के जानने के कारण मैंने मन ही मन यह बात जान ली कि इन दोनो में कौन हमीदा है और कौनसी कुसीदा !

निदान, फिर तो हिमादा मुझसे कुछ इधर उधर की दो चार बातें कर के यह कह कर उठ गई कि,—'मैं आपके लिये शर्बत लाती हूं; ' और मैं कुसीदा के साथ अकेला रह गया। उस समय कुसीदा यद्यपि मेरे सामने थी, पर वह लज्जावन्ती लता के सामन बिलकुल सकुची हुई थी और हमीदा के जाने पर मेरा भी शरीर कुछ कांपने लग गया था। सो उसी अवस्था में—उस कांपते हुए हाथ से ही मैंने कुसीदा का हाथ थाम्ह लिया और उसकी अंगुली में एक बहुमूल्य हीरे की अंगूठी पहिना दी। उस अंगूठी को देख कर वह ज़रा सा मुस्कुराई और अपने गले में से एक वैसी ही 'याक़ूतीतख़्ती' उतार कर,

जैसी कि हमीदा ने निहालसिंह को दी थी, मेरे गले में डाल दी।

मैंने फिर उसके हाथ को अपने हाथ में ले कर कहा,—"प्यारी, कुसीदा! आज सत्य की साक्षी मान कर मैं अपना हृदय तुम्हारे समर्पण करता हूं और तुम्हे अपनी गृहस्वामिनी बनाता हूं।"

यह सुन कर कुसीदा ने मेरे हाथ को चूम लिया और मुझसे आंखे मिला कर और फिर उन्हें नीचे कर के कहा,—"मैं आपकी लौंडी हूं।"

इतने ही में किसी तरह का कोई खटका हुआ, जिसे सुन कर कुसीदा ने मेरे हाथ में से अपना हाथ खैंच लिया, और मैं भी कुछ सावधान हो गया, पर कोई वहां पर आया नहीं। थोड़ी देर तक तो हम दोनो चुपचाप थे, पर जब मैंने यह समझ लिया कि अभी यहां कोई न आवेगा तो मैंने प्रेमान्ध होकर कुसीदा को अपनी ओर खैंच कर उसे अपने हृदय से लगा लिया और उसके गालों को चूम कर कहा,—"प्यारी! मुझे न भूलना।"

कुसीदा ने भी मेरे ओठों को चूम कर अपने सच्चे प्रेम का परिचय मुझे दिया और कहा,—"मैं तो अब आपकी लौंडी हूं, इसलिये यह बात तो मुझे कहनी चाहिए कि आप मुझ पर हमेशः मिहरबानी रक्खेंगे और मुझे कभी भूल न जायंगे।"

अहा! एक यह भी प्रेम है! और एक कलकत्ते वाली उस ब्राह्म-भगिनी कुलटा का भी प्रेम था!!! अब पाठक इस पर स्वयं विचार करलें कि सच्चा प्रेम कौन है और स्वर्ग के सच्चे सुख का अनुभव कौन कराता है!!!

निदान, एक घंटे तक मैं कुसीदा के साथ प्रेम की बातें करता रहा, इसके अनन्तर एक लौंडी ने आकर हमीदा के आने की ख़बर दी और उसके दूसरे ही क्षण हाथ में शर्बत का प्याला लिए हुई हमीदा आ पहुंची। उसने प्याला कुसीदा के हाथ में देकर कहा,—"इसे इन्हें पिलाओ;" और मेरी ओर देखकर कहा,—"आज आप को हमलोंगो के साथ खाना, खाना होगा।"

इतना कह और मेरा उत्तर बिना सुनेही हमीदा वहांसे चली गई और उसके जानेपर कुसीदा ने बड़े प्यार से मेरे गले में बाहें डालकर शर्बत का प्याला मेरे मुहं से लगा दिया। फिर तो थोड़ासा शर्बत मैंने पीया और थोड़ासा अपने हाथ से कुसीदा को पिलाया और फिर

एकान्त में उसके साथ प्रेम की बातें करनी प्रारंभ की। इन्हीं दो घटों में ही मैंने यह बात जानली कि कुसीदा गुणों की खान, प्रेम की सरिता, स्वभाव की सुधा और वसुधा में साक्षात् स्वर्गीया नारी है।

निदान, फिर तो मैंने, निहालसिंह ने, हमीदा ने और कुसीदा ने एक साथ बैठकर बहुतही सुस्वादु भोजन किया और भोजन करने के बाद पान के साथही कुसीदा के अधरोष्ठ के अमृत का पान करके मैं अपने डेरे पर लौट आया, उस समय भी निहालसिंह मेरे साथ आए थे और मुझे पहुंचा कर पुनः लौट गए थे।

दोनों याक़ूतीतख्तियों में फ़ारसी भाषा की जो शेरें ख़ुदी हुई थीं, उनके भाव से मिलते जुलते एक श्लोक को नीचे लिख कर हम इस परिच्छेद को पूरा करते हैं,—

"प्रेम एव परो धर्म्मः,
प्रेम एव परं तपः।
प्रेम एव परं ज्ञानं,
प्रेम एव परा गतिः॥"

अब यहां पर इतनाही कहना शेष रह गया है कि एक दिन हमीदा के साथ निहालसिंह का और कुसीदा के साथ मेरा विवाह होगया और हमदोनो प्रेमियों ने अपने अपने स्वभाव के अनुसार रूपवती, गुणवती, शीलवती, और प्रेमवती प्रणयिनी को पाकर अपना अपना भाग्य सराहा।

निहालसिंह ने बड़ी कठिनाई से हमीदा और कुसीदा के हृदय से मुहम्मदी धर्म की जड़ उखाड़ी थी और उन दोनों के हृदय में यह पौधा रोप दिया था कि,—"स्त्रियों का स्वतंत्र धर्म कोई नहीं है। बस उन्हें वही धर्म मानना चाहिए, जिस धर्म में उनका पति दीक्षित हो।" इसके अनुसार हमीदा ने सिक्खधर्म का अवलंबन किया और कुसीदा ने ब्राह्ममत का।

कुछ दिनों तक और वहीं रहकर निहालसिंह हमीदा को लेकर अपने देश को चले गए और मैं कुसीदा के साथ अपने घर लौट आया।

घर आकर मैंने देखा कि मेरे सत्यनिष्ठ मैनेजर ने मेरे ष्टेट का बहुत ही अच्छा प्रबंध किया है।

फिर तो कभी कुसीदा को लेकर मैं निहालसिंह के घर जाता और कभी वे हमीदा को लेकर मेरे पाहुने बनते। योंहीं दोसाल के अनन्तर ठीक समय पर हमीदा और कुसीदा, दोनोही पुत्रवती हुईं और उन दोनों की गोदी भरी पूरी हुई। जगदीश्वर! तू संसार में सभों को ऐसाही विमल आनन्द प्रदान किया कर।

कृतज्ञता स्वीकार।

बंगाली-लेखक बाबू दीनेन्द्रकुमार राय के "हमीदा" नामक उपन्यास की छाया पर यह उपन्यास लिखा गया है, इसलिये हम शुद्धान्तःकरण से उक्त बाबूसाहब की कृतज्ञता स्वीकार करते हैं।

"हमीदा" वियोगान्त उपन्यास है, पर हमने इसे संयोगान्त बनाया है। जो बंगला जानते हैं, वे इसके साथ बंगला के उपन्यास को पढ़कर यह बात भली भांति जान लेंगे कि हमारा यह उपन्यास "हमीदा" का अनुवाद नहीं है, वरन इसे हमने अपने ढंगपर पूरी स्वाधीनता से लिखा है; किन्तु जिसकी छाया पर यह लिखा गया है, उसकी कृतज्ञता स्वीकार करने के लिये इतना लिखना हमने उचित समझा।

विनीत—

ग्रन्थकार।